मेहनत की महक

डॉ. रमेश मिलन



प्रकाशन विभाग

मेहनत की महक

मेहनत की महक

डा० रमेश मिलन



प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

प्रथम संस्करण : शक 1919 (1997 ई)
द्वितीय संस्करण : शक 1920 (1999 ई)
तृतीय संस्करण : शक 1921 (2000 ई)
चतुर्थ संस्करण : शक 1922 (2000 ई)

ISBN : 81-230-0527-X

मूल्य : 38.00 रुपये

निदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
पटियाला हाउस, नई दिल्ली - 110 001 द्वारा प्रकाशित।

विक्रय केन्द्र ● प्रकाशन विभाग

- पटियाला हाउस, तिलक मार्ग, नई दिल्ली - 110 001
- सुपर बाजार (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली - 110 001
- हॉल नं. 196, पुराना सचिवालय, दिल्ली - 110 054
- कामर्स हाउस, करीमभाई रोड बालार्ड पायर, मुंबई - 400 038
- 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता - 700 069
- राजाजी भवन, बेसेंट नगर, चेन्नई - 600 090
- बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना-800 004
- प्रेस रोड, निकट गवर्नमेण्ट प्रेस, तिरुअनंतपुरम - 695 001
- प्रथम तल, एफ विंग, केन्द्रीय सदन, कोरामंगला बंगलौर - 560 034
- अम्बिका कॉम्प्लैक्स, प्रथम तल, पाल्डी, अहमदाबाद, - 380 007
- नवजन रोड, उजान बाजार, गुवाहाटी - 781 001
- 27/6, राम मोहन राय मार्ग, लखनऊ - 226 001
- राज्य पुरातत्वीय संग्रहालय बिल्डिंग, पब्लिक गार्डंस, हैदराबाद - 500 004

विक्रय काउंटर ● पत्र सूचना कार्यालय

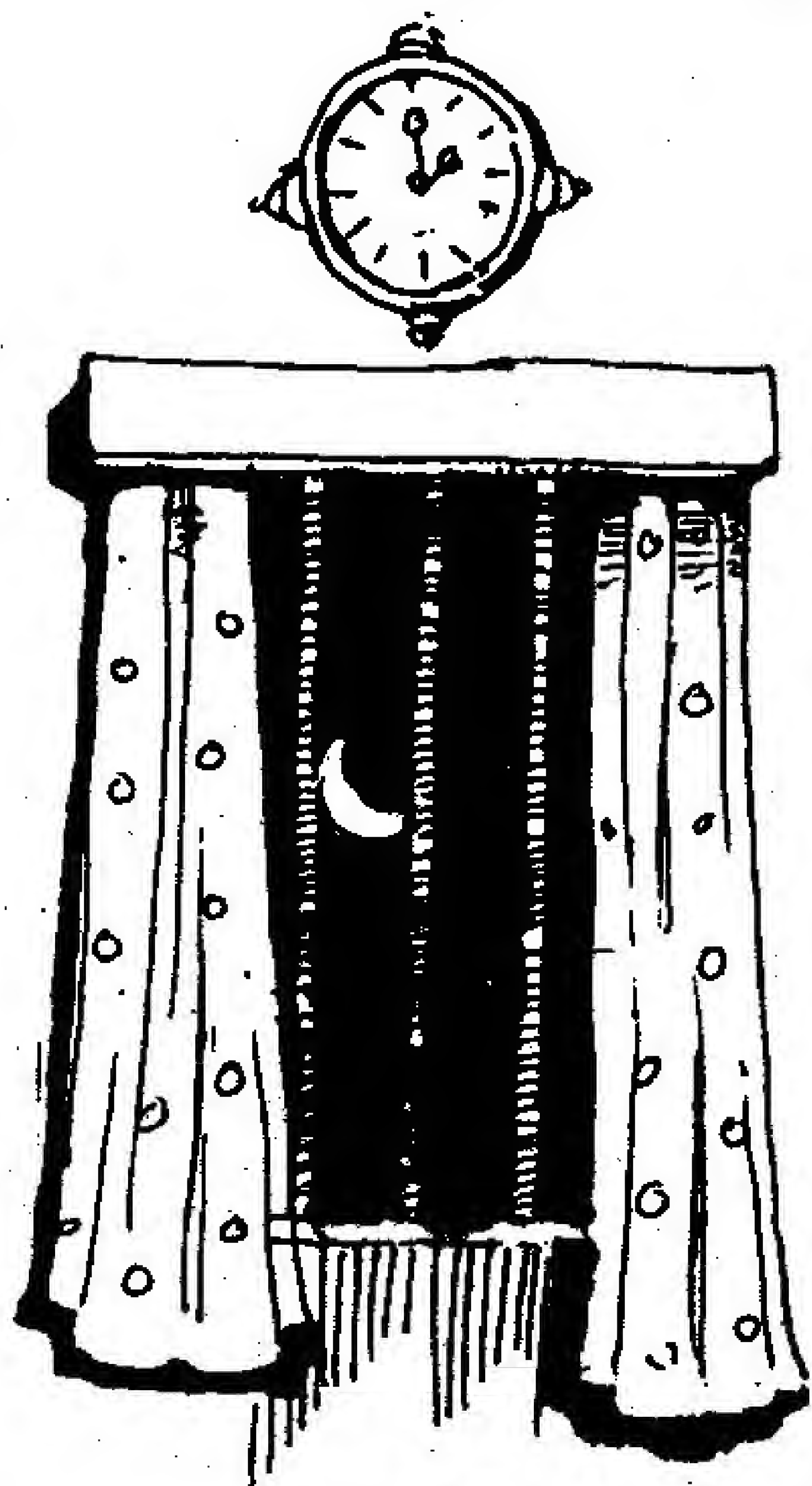
- 80, मालवीय नगर, भोपाल - 462 003 (म.प्र.)
- सी.जी.ओ. काम्प्लैक्स, 'ए' विंग, ए.बी. रोड, इंदौर (म.प्र.)
- बी-7बी, भवानी सिंह मार्ग, जयपुर - 302 001 (राजस्थान)

क्वीक प्रिंटर्स, नारायणा, नई दिल्ली - 110 028
मुद्रक : आकाशदीप प्रिन्टर्स, 20, अन्सारी रोड, दरियागंज नई दिल्ली-2.

कथा क्रम

मेहनत की महक

रात काफ़ी बीत चुकी थी। कमरे में बत्ती जल रही थी। अनु के पिता ने कमरे में अंदर आते हुए पूछा, "अनु! क्या अभी तक सोई नहीं हो? सुबह उठ कर पढ़ लेना। अब सो जाओ। समय बहुत हो गया है।"



"ठीक है पिताजी, अभी सोती हूं। कल का पेपर कुछ कठिन है, इसीलिए देर तक पढ़ रही थी।" अनु ने उत्तर दिया।

"और हाँ, बबलू भी पढ़ रहा है या सो गया?" पिताजी ने फिर पूछा।

"बबलू कभी का सो गया है पिताजी, उसे तो परीक्षा की कुछ चिंता नहीं है।" अनु ने बबलू की शिकायत लगाते हुए कहा। "कह रहा था, मेरे आगे की सीट वाला लड़का बहुत होशियार है। वह इस तरह से बैठता है कि मैं उसकी सारी कापी की नकल मार लेता हूं।"



"नकलची कहीं का।" मुंह बिचकाते हुए अनु बोली, "पिताजी! नकल करना कोई अच्छी बात है क्या? नकल करके पास होने से क्या लाभ?"

अनु को गुस्सा आ रहा था, कि बबलू तो बिना मेहनत किए ही पास हो जाएगा और उसे इतनी मेहनत करनी पड़ रही है।

अनु के पिता बहुत ही परिश्रमी और ईमानदार व्यक्ति हैं। उन्होंने अनु को समझाते हुए कहा, "देखो बेटी, मेहनत करके पास होना गौरव की बात है। परिश्रम से प्राप्त की हुई शिक्षा ही जीवन में काम आती है। नकल पर या दूसरे अनुचित साधनों पर कभी निर्भर नहीं रहना चाहिए। तुम इतनी लगन से पढ़ाई कर रही हो, तुम्हें इस का फल अवश्य मिलेगा। रहा बबलू, सो मैं उसे समझाऊंगा।"

"नहीं पिताजी, आप उसे समझाना नहीं, बल्कि डांटना," अनु गुस्से में बोली। "ठीक है बिटिया, हम उसे खूब डांटेंगे। अब सो जाओ।" विनोद बाबू हंसते हुए अनु के सिर पर हाथ फेरते हुए बोले।

कुछ दिन में परीक्षा भी समाप्त हो गई। एक दिन दौड़ता हुआ बबलू दरवाजे से ही "अनु दीदी! अनु दीदी!" चिल्लाता हुआ घर के अंदर आया।

"अरे! इतना खुश क्यों हो रहा है? आखिर बात क्या है?" अनु ने आश्चर्य



से पूछा।

"दीदी! पहले यह गुलाब का फूल लो। तुम्हें गुलाब का फूल बहुत पसंद है न?" बबलू हांफता हुआ बोला। "हां, पसंद तो है पर यह फूल किस खुशी में है?" अनु का कौतूहल बढ़ता ही जा रहा था।

बबलू मासूम सा बन कर बोला, "दीदी, मैं परीक्षा में फिर से पास हो गया हूं।"

"हूं, तो यह बात है। समझी, मैं नहीं लेती तेरा गुलाब का फूल।" उसे फेंकते हुए अनु गुस्से से बोली।

"दीदी, तुमने मेरा गुलाब का फूल क्यों फेंक दिया? क्या मेरा पास होना तुम्हें अच्छा नहीं लगा? तुम तो मुझसे बड़ी हो। तुम्हें तो खुश होना चाहिए।" रुंआसां होते हुए बबलू बोला।

"अरे! नकल मार कर पास होना भी क्या कोई पास होना है? खुश तो ऐसे हो रहा है जैसे दिन-रात एक करके पढ़ाई की हो। बबलू, कान खोल कर सुन ले। तेरा गुलाब का फूल उस दिन स्वीकार करूंगी, जिस दिन तू अपनी मेहनत से परीक्षा में उत्तीर्ण होगा।" अनु ने बबलू को झिड़कते हुए कहा।

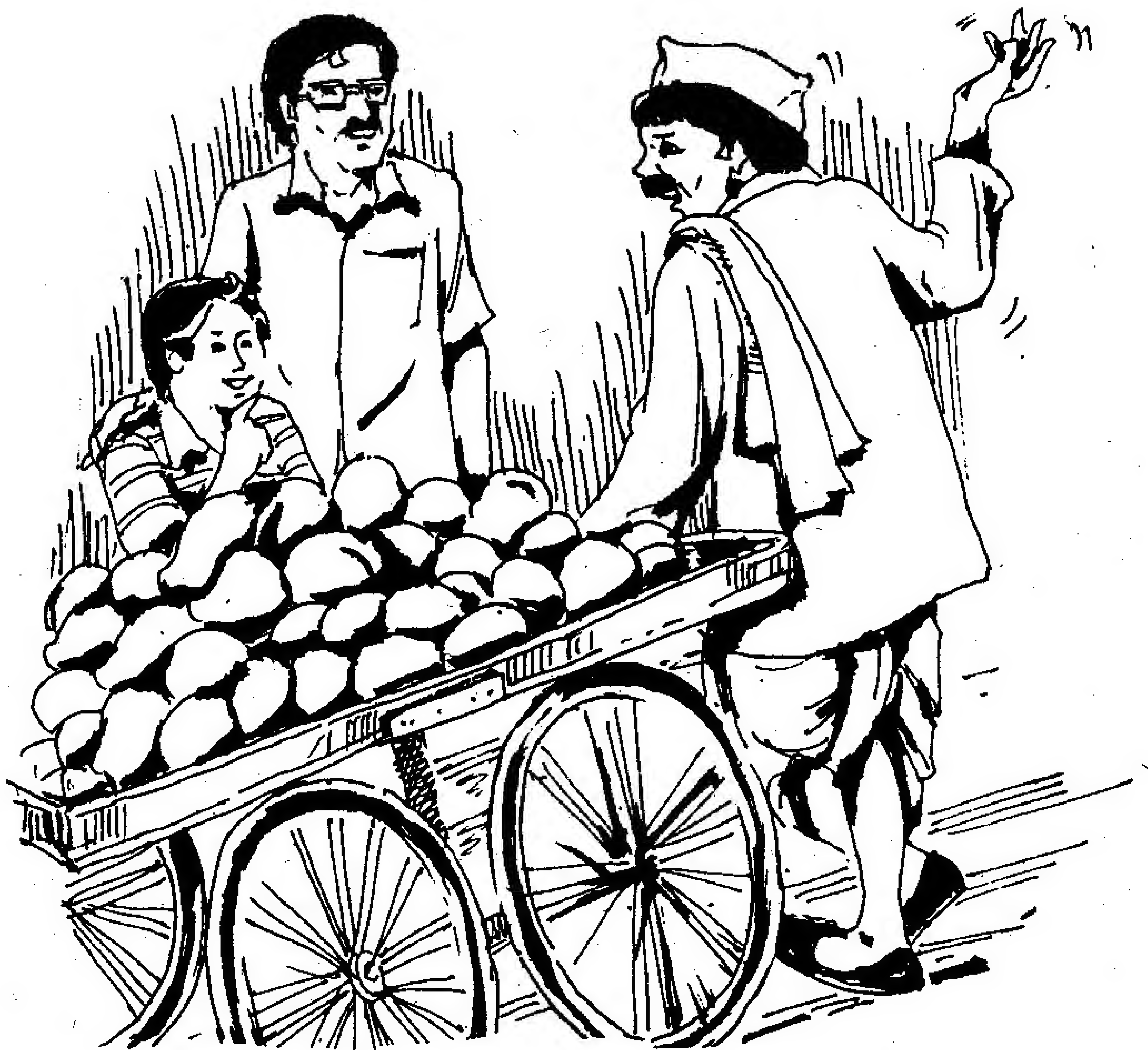
तभी अनु के पाले हुए दोनों तोते चिल्ला उठे, "अनु ठीक! अनु ठीक!" अब तो बबलू का पारा सातवें आसमान पर चढ़ गया। चीखते हुए बोला, "अबे चुप! तुम भी दीदी की चापलूसी करते हो।"

बबलू पैर पटकता हुआ बाहर निकल ही रहा था कि विनोद बाबू आ गए। उन्होंने बबलू को पुचकारते हुए शांत किया और घुमाने के लिए बाहर ले गए।

विनोद बाबू बबलू को लेकर घूमते-घूमते एक फल वाले के पास पहुंचे। फल वाले ने हाथ जोड़ कर विनोद बाबू को नमस्कार किया और उनके चरण स्पर्श करने को झुका। लेकिन विनोद बाबू ने उसे बीच में ही रोक कर उसकी पीठ थपथपाई।

फल वाले की आंखें श्रद्धा से झुकी हुई थीं।

बबलू विनोद बाबू के कान में फुसफुसाते हुए बोला, "पिताजी! ये फल वाला



आपके पैर क्यों छू रहा था?''

बबलू की बात सुन कर विनोद बाबू खिलखिला कर हंस पड़े। फल वाले से बोले, ''भाई! हमारे बेटे को यह बताओ कि तुम हमारे पैर क्यों छू रहे थे?''

फल वाले ने बड़े प्यार से कहा, ''अरे! बबलू भइया, अब तुम्हें क्या बताएं? जो तुम यह फल की ठेली देख रहे हो न! यह सब तुम्हारे पिता जी का आशीर्वाद है। नहीं तो आज हम भी सड़क पर बैठ कर भीख मांग रहे होते।''

भरे गले से फल वाला कहे जा रहा था, ''कुछ दिन पहले इसी जगह बैठ कर मैं भीख मांगा करता था। तुम्हारे पिता जी रोज यहां से निकलते थे। मुझ पर तरस खा कर कुछ न कुछ पैसे दे देते थे। साथ ही मुझे भीख मांगना छोड़ कर मेहनत से कमाने की सलाह भी देते थे।''

"फिर तुम्हारे पास फलों की इतनी बड़ी ठेली कहां से आ गई?" बबलू बात काटते हुए बोला।

"वही तो हम तुम्हें बता रहे हैं, बबलू भइया।" मुस्कराते हुए फल वाला कहने लगा, "एक दिन तुम्हारे पिताजी ने दो रुपये का सिक्का मेरी तरफ इस तरह उछाला कि वह मेरे हाथ में न आकर नाली में चला गया। मैं सिक्के को खोना नहीं चाहता था। मेहनत करके किसी तरह वह सिक्का आखिर मैंने नाली में से निकाल ही लिया। सिक्का पाकर मैं बहुत खुश हुआ। इस पर बाबू जी ने पूछा, "भई, इसमें इतना खुश होने की क्या बात है?"

मैंने कहा, "साहब, देखते नहीं कितनी मेहनत से सिक्का ढूंढा है। खुशी की बात नहीं तो और क्या है?" इस पर बाबू जी ने कहा, "जब तुम भीख में दिए हुए सिक्के को ढूंढ कर इतने खुश हो तो सोचो कि अगर भीख मांगना छोड़ कर मेहनत से कमा कर खाओ तो तुम्हें कितनी खुशी मिलेगी।" सो बबलू भइया, उस दिन बाबू जी की शिक्षा ने हम पर जादू का सा असर किया और आज हम आप लोगों के सामने अपना धंधा कर रहे हैं। भीख नहीं मांग रहे हैं।"

फल वाले की बात सुन कर बबलू गंभीर हो गया। उसने मन ही मन निश्चय किया कि मैं अब किसी भी कापी से नकल नहीं करूंगा। वह भी तो भीख मांगने जैसा या फिर चोरी जैसा ही तो है। अब तो मेहनत से पढूंगा और अच्छे अंक प्राप्त कर दिखाऊंगा।

वार्षिक परीक्षा का परिणाम आने पर बबलू गुलाब का फूल लेकर अनु के पास जाकर बोला, "दीदी! लो, तुम्हारे लिए गुलाब का फूल लाया हूं। तुम्हें गुलाब का फूल बहुत पसंद है न! लेकिन आज . . .

बीच में ही बात काटते हुए अनु मुस्कराते हुए बोली "मुझे पता है। इस बार तुम अपने परिश्रम से परीक्षा में सफल हुए हो।"

"मेरे प्यारे भइया बबलू, सचमुच में आज बहुत खुश हूं और देखो यह गुलाब का फूल भी आज तुम्हारी तरह कितनी सुगंध बिखेर रहा है, न!"

"हां दीदी"। कहते हुए बबलू अनु के गले से लिपट गया। □

बदल गई जीवन धारा

सचिन और निखिल दोनों एक ही कक्षा में पढ़ते थे। दोनों के घर भी आस-पास थे। दोनों साथ-साथ विद्यालय जाते और साथ ही घर लौटते थे।

सचिन मन लगा कर पढ़ता और परीक्षा में सदैव प्रथम स्थान प्राप्त करता था। वह अपने शिक्षकों का भी बहुत आदर करता था। विद्यालय के शिक्षक भी उसे बहुत स्नेह देते थे। कक्षा से बाहर भी उसकी पढ़ाई सम्बन्धी कठिनाइयां दूर करने में उसकी सहायता करते थे। सचिन के साथी भी उसे बहुत चाहते थे। उसका मधुर व्यवहार सबका मन मोह लेता था। सचिन शरीर से कुछ दुबला अवश्य था लेकिन था बिलकुल स्वस्थ।

निखिल का स्वभाव सचिन से बिलकुल उल्टा था। वह पढ़ाई में तो पिछड़ा रहता ही था, शरारती भी था। शारीरिक रूप से वह अवश्य पुष्ट था। उसकी शरारतों से उसके सहपाठी सदा परेशान रहते थे। वह कभी किसी का पेन छीन लेता तो कभी किसी की पुस्तक। अध्यापक भी उसकी हरकतों से तंग थे।

साथी होने के नाते सचिन उसको समझाने की कोशिश करता तो निखिल उसकी हंसी उड़ाता।

विद्यालय के बाहर फल और चाट बेचने वाले बैठते थे। उनमें एक गरीब बालक भी था, जिसके पिता अब इस दुनिया में नहीं थे। वह फल बेचकर अपनी गरीब मां का और अपना पेट पाल रहा था।

एक दिन आधी छुट्टी में निखिल बिना पैसे दिए उस गरीब बालक की टोकरी से फल उठा कर चल दिया। जब उसने निखिल से फल वापिस करने की विनती की तो निखिल ने उसकी फल वाली टोकरी ही उलट दी और दो-चार लात घूंसे भी उसे जमा दिए।

वह गरीब बालक रोने लगा। तभी सचिन भी वहां आ गया। सचिन ने निखिल

की इस हरकत के लिए उसे डांटा। इस पर निखिल ने सचिन को भी देख लेने की धमकी दी। सचिन शांत रहा लेकिन उसने मन ही मन निखिल से अलग रहने का संकल्प कर लिया।

सचिन भारी मन से कक्षा में चला गया। कक्षा में अध्यापक ने सचिन से उदासी का कारण पूछा तो सचिन ने सारी घटना बता दी।



अध्यापक ने निखिल की शिकायत करते हुए प्रधानाचार्य से कहा, "निखिल विद्यालय के लिए अब सिर-दर्द बन चुका है। उसकी शरारतें बढ़ती ही जा रही हैं।"

प्रधानाचार्य ने पहले भी कई बार निखिल को अपनी हरकतों से बाज आने के लिए समझाया था।



लेकिन निखिल का हौसला दिन-पर-दिन बढ़ता ही जा रहा था। वह एक कान से सुनता और दूसरे कान से निकाल देता।

प्रधानाचार्य ने अध्यापकों के साथ एक बैठक की। निखिल की समस्या उनके सामने रखी। अध्यापकों ने निखिल को विद्यालय से निकालने पर जोर दिया।

लेकिन शारीरिक शिक्षक ने सुझाव दिया, ''निखिल को विद्यालय से निकालना ठीक नहीं होगा। यह तो हम सबकी कमजोरी मानी जाएगी कि हम एक बालक को सुधार नहीं पा रहे हैं। विद्यालय से निकाले जाने पर तो वह और भी गलत रास्ते पर बढ़ता चला जाएगा। मेरा विचार है कि उसका ध्यान खेल-कूद में लगा दिया जाए तो संभवत: उसकी शरारतें बंद हो जाएं और वह ठीक रास्ते पर आ जाए।''

काफी सोच विचार करने के बाद निखिल को सुधारने की जिम्मेदारी शारीरिक शिक्षक को सौंप दी गई। शारीरिक शिक्षक ने निखिल को अपने कक्ष में बुला कर खेलों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया। इस पर निखिल ने अपनी मजबूरी बताई कि उसे खेलना आता ही नहीं है।

"खेल-कूद सिखाना हमारी जिम्मेदारी है।" निखिल का साहस बढ़ाते हुए अध्यापक ने अगले दिन से निखिल को खेल के मैदान पर पहुंचने की हिदायत दी।

निखिल अब खेल के मैदान पर पहुंचने लगा। धीरे-धीरे वह फुटबाल, कबड्डी, हॉकी आदि खेलों में रुचि लेने लगा। एक दिन ऐसा भी आया कि वह विद्यालय की हॉकी टीम का कप्तान बन गया। अब निखिल के नेतृत्व में विद्यालय की टीम दूसरे विद्यालयों में खेलने जाने लगी और पुरस्कार भी जीत कर लाने लगी। निखिल को हॉकी में जिले के सर्वश्रेष्ठ खिलाड़ी का पुरस्कार मिला।

खेलों में मिली इस सफलता से अब पढ़ाई में भी निखिल की रुचि पैदा हो गई। उसके व्यवहार में भी गम्भीरता आ गई। दूसरे सहपाठियों को तंग करने और दंगा-फसाद करने वाला निखिल अब सुधर चुका था। वह दूसरों की मदद करने तथा मिल-जुल कर काम करने के महत्व को समझने लगा था। निखिल के जीवन की धारा ही बदल गई। बोर्ड की परीक्षा में उसने प्रथम श्रेणी प्राप्त की। अब निखिल 'स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मस्तिष्क होता है' की जैसे मिसाल बन चुका था। ❒

गौरव

श्री कृपाशंकर शास्त्री अनुशासन प्रिय, परिश्रमी तथा आदर्श शिक्षक माने जाते थे। अध्यापन के समय छात्रों की उद्दंडता उन्हें बिलकुल भी सहन नहीं थी।

पढ़ाई के साथ-साथ वह नैतिक शिक्षा पर भी बहुत बल देते थे। नैतिक शिक्षा को विद्यार्थी के चरित्र निर्माण के लिए अनिवार्य समझते थे। विद्यार्थी भी उनका बहुत सम्मान करते थे। यहां तक कि विद्यालय के प्रधानाचार्य और शिक्षक भी उन्हें आदर की दृष्टि से देखते थे।



एक दिन श्री शास्त्री बड़ी लगन के साथ कक्षा में छात्रों को पढ़ा रहे थे। छात्र भी मन लगाकर पढ़ रहे थे। तभी एक छात्र ने गेट पर खड़े होकर पूछा, "सर, क्या मैं अंदर आ सकता हूं?" शास्त्री जी ने मुड़कर छात्र की ओर देखा। उन्हें थोड़ा गुस्सा आया। बोले, "गौरव, क्या यह समय तुम्हारे विद्यालय आने का है? तुम्हें मालूम है दूसरा पीरियड समाप्त होने जा रहा है। तुम अच्छी तरह जानते हो कि अनुशासनहीनता मुझे जरा भी पसंद नहीं है। यह ठीक है कि तुम पढ़ाई में होशियार हो, लेकिन विद्यालय के भी कुछ नियम हैं। जिनका पालन मैं भी करता हूं। ठीक है, अब अंदर आओ, लेकिन विद्यालय देर से आने का दंड तो तुम्हें अवश्य ही मिलेगा।"

लेकिन सर, मेरी बात तो सुनिए, मैं तो . . . मैं तो . . . " गौरव कहता ही रह गया। शिक्षक महोदय ने गौरव की कोई बात नहीं सुनी और कक्षा के पीछे वाली बेंच पर खड़े रहने का निर्देश दिया।

गौरव उदास मन से बेंच पर खड़ा हो गया। बेंच पर खड़े-खड़े दो पीरियड और बीत गये। उसकी टांगे भी जबाब देने लगी थीं। वह बार-बार गिरते-गिरते बचता। परंतु शास्त्री जी की आज्ञा भंग करने की हिम्मत किसकी थी? गौरव बार-बार साहस जुटाता और फिर संभल कर खड़ा हो जाता। जैसे-तैसे उसने विद्यालय का समय बिताया। छुट्टी होने पर अपने एक साथी का सहारा लेकर गौरव घर पहुंचा। घर पहुंचते ही वह बिस्तर पर लुढ़क गया।

गौरव की मां ने उसे इस तरह बिस्तर पर पड़े देखा तो दौड़कर उसके पास आई। मां ने जैसे ही गौरव के शरीर को छुआ तो घबराते हुए बोलीं, "अरे! तुम्हें तो बहुत तेज बुखार है। शरीर गरम तवे की तरह जल रहा है।" मां ने तुरंत गौरव की बहिन को डॉक्टर को बुला लाने के लिए भेजा।

गौरव की यह हालत देखकर मां की आंखों में आंसू बहने लगे। गौरव ने मां के आंसू पोंछते हुए कहा, "मां, तुम चिंता मत करो। मैं जल्दी ही ठीक हो जाऊंगा।"

"लेकिन अचानक यह हुआ कैसे?" मां ने व्याकुलता से पूछा।

"मां छोड़ो न, बुखार ही तो है, उतर जायेगा।" गौरव मां को ढांढस बंधाते हुए बोला।

"लेकिन सुबह जब तू विद्यालय गया था, बिल्कुल ठीक था। तुझे मेरी सौगंध, ठीक-ठीक बता। देख, अपनी मां से झूठ मत बोलना।"

"अच्छा मां, जब तुमने अपनी सौगंध दे ही दी है तो बताता हूं। मां, मेरा एक सहपाठी है सलीम। पढ़ने-लिखने में होशियार तो है ही, वह स्वभाव का भी बहुत अच्छा है। लेकिन मां, ईश्वर ने शायद उसके साथ न्याय नहीं किया है।"

"यह तू क्या कहता है बेटा, ईश्वर तो बड़ा न्यायकारी है। उससे बड़ा न्यायाधीश भला और कौन हो सकता है?" मां ने कहा।

"यह तो ठीक है मां। लेकिन देखो न, सलीम के एक पैर में पोलियो हो गया और हमेशा के लिए वह अपंग हो गया। सलीम का जब जन्म हुआ था, तब वह शारीरिक रूप से पूरी तरह स्वस्थ था। कुछ



दिन बाद उसे पोलियो हो गया। उसके माता-पिता गरीब और अनपढ़ होने के कारण ठीक से उसका इलाज नहीं करा पाए। लापरवाही में उन्होंने उसे बचपन में 'पोलियो ड्रॉप्स' भी नहीं दिलाई। पैर कमजोर होने के कारण वह लंगडा कर चलता है।" गौरव बोला।

"हे भगवान!" मां को भी बड़ा दुख हुआ।

"विद्यालय में बच्चे उसकी हंसी उड़ाते हैं। तरह-तरह के उसके नाम रखते हैं। अपने साथियों की इन हरकतों से सलीम बहुत तड़पता है, रूआंसा हो जाता है। आकाश की ओर दोनों हाथ उठा कर कहता है, "या खुदा, तूने मुझे अपंग क्यों बना दिया? इससे तो अच्छा था, तू मुझे पैदा ही न करता।' कहते-कहते सलीम हिचकियां भर-भर कर रोने लग जाता है।"

"लेकिन बेटा, क्या तुम भी उसका . . .?" "नहीं मां," गौरव ने मां की बात काटते हुए कहा, "मैं तो सदा उसकी हिम्मत बंधाता हूं और हर काम में उसकी मदद करता हूं। मां, वह पढ़ने में बहुत होशियार है, हंसमुख भी है। सभी शिक्षकों का आदर भी करता है। मुझे सलीम बहुत अच्छा लगता है।"

"परंतु बेटा, अभी तक तुमने अपने बीमार होने का कारण नहीं बताया।" मां ने गौरव का सिर सहलाते हुए पूछा।

गौरव बोला, "मां, आज जब मैं विद्यालय जा रहा था तो रास्ते में एक स्थान पर बड़ी भीड़ जमा थी। मैं भी खड़ा हो गया। मेरे तो यह देखकर होश उड़ गए कि सलीम पड़ा तड़प रहा है, दर्द से बुरी तरह छटपटा रहा है। एक बार तो मेरी आंखों के सामने अंधेरा छा गया। मुझे सूझ नहीं रहा था कि मैं क्या करूं?"

"इतनी भीड़ में से किसी ने उसकी सहायता नहीं की?" गौरव की मां ने हैरत से पूछा। "कहां मां? सब तमाशा देख रहे थे। फिर मैंने हिम्मत बटोरी। एक सज्जन आदमी की सहायता से सलीम को अस्पताल पहुंचाया। डॉ. ने बताया कि उसके पैर की हड्डी टूट गई है। प्लास्टर चढ़ेगा। सलीम को ठीक होने में कुछ महीनों का समय लगेगा। मां, मुझे यह सुनकर बहुत दुख हुआ। मैं सलीम को अस्पताल में छोड़कर उसके घर उसके पिताजी को सूचना देने गया अब इसमें काफी समय लग गया। इसलिए विद्यालय देर से पहुंचने पर मुझे दंड मिला। पर इसका मुझे

कोई दुख नहीं।"

तभी डॉक्टर आ गया। गौरव की जांच करने के बाद डॉक्टर ने कहा, "चिन्ता की कोई बात नहीं है, गौरव कल तक अवश्य ठीक हो जायेगा।"

गौरव के शिक्षक श्री शास्त्री जी भी गौरव के घर उसकी कुशल पूछने आए। शास्त्री जी ने कहा, "मुझे गौरव के महान कार्य की सच्चाई सब मालूम हो गई है। मेरी वजह से ही इसे इतना कष्ट हुआ है। मुझे अपने गुस्से पर पछतावा है।" गौरव को आशीर्वाद देकर और उसके माता-पिता से खेद व्यक्त करके शास्त्री जी चले गए।

गौरव स्वस्थ होकर विद्यालय पहुंचा तो प्रार्थना स्थल पर प्रधानाचार्य ने कहा, "एक तरफ तो विद्यालय के वे छात्र हैं जो सलीम जैसे अपंग और असहाय छात्र को पीड़ा पहुंचाते हैं, उसकी हंसी उड़ाते हैं। दूसरी तरफ गौरव जैसा कर्त्तव्यपरायण, सेवा भाव रखने वाला छात्र है, जिसके हृदय में दया, करूणा और भाई-चारे का विशाल सागर लहराता है। विद्यालय के ही कुछ छात्रों ने सलीम को गिराकर उसकी टांग की हड्डी तक तोड़ दी। धन्य है गौरव, जिसने घायल सलीम को अस्पताल पहुंचा कर उसका इलाज करवाया। यही नहीं, इसी वजह से विद्यालय देर से पहुंचने पर अपने गुरु के दंड को भी नतमस्तक होकर स्वीकार किया। गौरव का चरित्र सबके लिए अनुकरणीय है। गौरव विद्यालय का ही नहीं, एक दिन अपने महान देश भारत का भी गौरव बनेगा।"

विद्यालय का प्रांगण देर तक तालियों की गड़गड़ाहट से गूंजता रहा। ❑

रामू और श्यामू

एक था रामू। एक था श्यामू। दोनों बहुत अच्छे दोस्त थे। रामू का एक पैर कमजोर था। इसलिए न तो वह बहुत तेज चल सकता था और न दौड़ सकता था। श्यामू जन्म से ही नेत्रहीन था। शरीर से विकलांग होते हुए भी दोनों गुणवान थे।

रामू और श्यामू में गहरी मित्रता थी। वे हमेशा साथ रहते थे। एक–दूसरे के बिना किसी का मन नहीं लगता था। अगर किसी कारण से दोनों का मिलन नहीं हो पाता तो उदास हो जाते थे।



रामू अपने गांव के विद्यालय में पढ़ने जाया करता था लेकिन श्यामू तो पढ़ ही नहीं सकता था क्योंकि उसके गांव में नेत्रहीन बच्चों का विद्यालय था ही नहीं। समू ही श्यामू को अपनी किताबों से अच्छी–अच्छी कहानियां और कविताएं सुनाया करता था। श्यामू बहुत खुश होता था। परंतु कभी–कभी वह उदास भी हो जाता था। श्यामू चाहता था कि वह स्वयं पढ़े। श्यामू अपने मन की बात कहे तो किससे कहे? वह अपने मन के दुःख को रामू से ही कह सकता था।

एक दिन श्यामू रामू से बोला, "रामू! मेरे दोस्त! क्या ऐसा नहीं हो सकता कि किसी तरह मैं भी लिख-पढ़ सकूं?"

रामू ने उसे बड़े प्यार से समझाया, "श्यामू! तुम चिंता क्यों करते हो? मैं हूं तो सही। तुम्हें सारी किताबें पढ़-पढ़ कर सुना देता हूं। फिर गांव में ऐसा विद्यालय भी तो नहीं, जहां तुम्हारे जैसे नेत्रहीन पढ़ सकें। गुरुजी बता रहे थे कि, -ऐसे विद्यालय शहरों में हैं। उनमें 'ब्रेल लिपि' द्वारा नेत्रहीन बच्चे पढ़ना सीखते हैं।" श्यामू के कंधे पर हाथ रख कर रामू ने उसे समझाते हुए कहा।

यह सुनकर श्यामू के होठों पर मुस्कुराहट फैल गई। रामू का हाथ पकड़ कर बोला, "रामू, ठीक है, मैं पढ़ने शहर जाऊंगा।"

रामू अपने दोस्त का दिल नहीं तोड़ना चाहता था परंतु वह सच्चाई से मुंह भी नहीं मोड़ना चाहता था। वह झिझकते हुए बोला, "श्यामू, मैं तेरी भावनाओं को अच्छी तरह समझता हूं। लेकिन तू शहर जाएगा कैसे? शहर में जाकर पढ़ने के लिए बहुत सारे रुपये चाहिए। क्या तुम्हारे माता-पिता तुम्हारी पढ़ाई का खर्चा उठा सकते हैं?" यह सुनते ही श्यामू उदास हो गया।

रुंआसा होते हुए श्यामू बोला, "घर का गुज़ारा ही मुश्किल से चल पाता है। बहुत सारे रुपये कहां से आएंगे। यह तो मैंने सोचा ही नहीं था। खैर छोड़ो, अपनी ऐसी किस्मत कहां कि शहर में जाकर पढ़ सकें।"

रामू ने श्यामू की पीठ थपथपाई। श्यामू को धीरज बंधाते हुए बोला, "सब ठीक हो जाएगा। हो सकता है एक दिन हमारे गांव में भी नेत्रहीनों को पढ़ाने के लिए विद्यालय खुल जाए। फिर तुम खूब पढ़ना और मेरे प्यारे श्यामू, तुम्हारा चलता-फिरता और हरदम साथ रहने वाला विद्यालय मैं हूं तो सही।"

यह सुनते ही श्यामू मुस्कुरा उठा।

रामू और श्यामू का गांव एक नदी के किनारे था। दोनों मित्र कभी-कभी नदी किनारे घूमने जाया करते थे।

एक दिन की बात है। रामू और श्यामू नदी किनारे घूम रहे थे। अचानक श्यामू का पैर फिसला। उसने संभलने की बहुत कोशिश की, लेकिन वह नदी में गिर

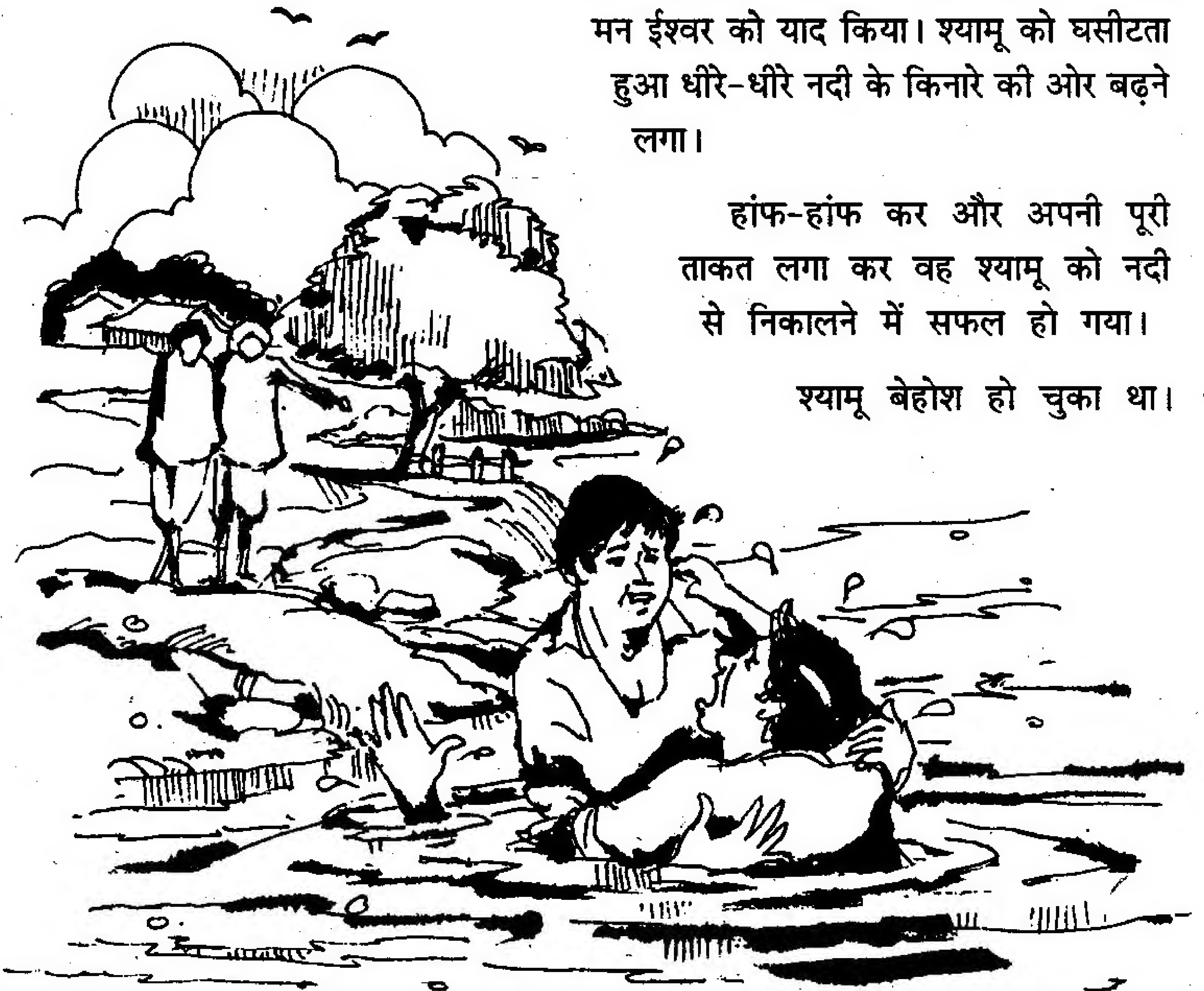
गया। उसे तैरना भी नहीं आता था। वह नदी में डूबने लगा और रामू-रामू चिल्लाने लगा।

रामू तो एकदम घबरा गया। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि वह क्या करे। उसके हाथ-पैर फूल गए। रामू ने इधर-उधर देखा, उसे कोई भी दिखाई नहीं दिया। रामू इतना डर गया कि सहायता के लिए आवाज भी उसके मुंह से नहीं निकल पा रही थी। रामू को तैरना तो आता था लेकिन एक पैर कमज़ोर होने के कारण बहुत समय तक तैरना उसके लिए मुश्किल था।

समय कम था। रामू ने हिम्मत बटोरी और नदी में छलांग लगा दी। पानी को काटता हुआ वह श्यामू के पास तक पहुंच गया। सौभाग्य से उसके हाथ में श्यामू की कमीज आ गई। रामू ने मन ही मन ईश्वर को याद किया। श्यामू को घसीटता हुआ धीरे-धीरे नदी के किनारे की ओर बढ़ने लगा।

हांफ-हांफ कर और अपनी पूरी ताकत लगा कर वह श्यामू को नदी से निकालने में सफल हो गया।

श्यामू बेहोश हो चुका था।



उधर से गुजरते हुए राहगीरों ने श्यामू को उलट-पलट कर उसके पेट से पानी निकाला। धीरे-धीरे उसे होश आ गया और रामू-रामू कह कर बुदबुदाने लगा।

श्यामू को होश आने पर रामू की आंखों में खुशी से आंसू छलछला उठे।

श्यामू ने रामू को गले लगाते हुए कहा, "मेरे प्यारे दोस्त रामू! आज से तुम्हीं मेरी आंखें हो जिनसे देख कर मैं चलूंगा और तुम्हीं मेरे विद्यालय हो जिससे ज्ञान प्राप्त करके मैं अच्छा इंसान बनूंगा।"

रामू द्वारा अपने दोस्त की जान बचाने की बात रामू के विद्यालय के प्रधानाचार्य तक भी पहुंच गई। विद्यालय में एक समारोह का आयोजन किया गया। जिसमें प्रधानाचार्य जी ने विद्यार्थियों तथा गांव के लोगों के सामने रामू के साहस और सच्ची दोस्ती की खूब प्रशंसा की।

प्रधानाचार्य रामू के इस महान कार्य के लिए उसे पुरस्कार देना चाहते थे। लेकिन रामू ने बड़े ही आदर और विनम्रता से उनसे प्रार्थना की, "गुरुदेव! यदि आप मुझे पुरस्कार देना ही चाहते हैं तो श्यामू जैसे नेत्रहीन बच्चों के लिए गांव में पढ़ाई की व्यवस्था करवा दें, यही मेरा सबसे बड़ा पुरस्कार होगा।"

रामू के इस त्याग और मित्र प्रेम को देख कर प्रधानाचार्य ने यह विश्वास दिलाया कि वे श्यामू जैसे बच्चों की पढ़ाई की व्यवस्था कराने की भरपूर कोशिश करेंगे।

यह बात स्थानीय समाचार पत्रों के जरिए जिले के युवा डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट तक भी पहुंची। उन्होंने जिला मुख्यालय के 'अंध विद्यालय' में श्यामू की पढ़ाई की व्यवस्था करवा दी। उसकी शिक्षा, रहना-खाना निःशुल्क था।

पर श्यामू का वहां मन नहीं लगता था। वहां रामू जो नहीं था। और जब आठवीं कक्षा में पूरी तहसील में रामू प्रथम आया तो उसे भी जिला मुख्यालय में 'मॉडल स्कूल' में पढ़ने का मौका मिला।

रामू वहां होस्टल में रहकर मेहनत से पढ़ाई कर रहा है। वह सांस्कृतिक कार्यक्रमों में भी भाग लेता है और खेलों में भी दिलचस्पी लेता है।

लेकिन श्यामू के पास अक्सर जाना वह कभी नहीं भूलता। ❐

जागते रहना

विद्यालय के कुछ विद्यार्थी और शिक्षक शहर से दूर जंगल में पिकनिक मानने गए। बच्चों के चेहरे जंगल की हरियाली और ताजी हवा से फूल से खिल गए। हरी-हरी मुलायम घास, नदी का कल-कल करता पानी, घने छायादार वृक्ष और चहचहाते पक्षियों ने सभी का मन मोह लिया।



कुछ विद्यार्थी तरह-तरह के खेलों में मस्त हो गए तो कुछ पेड़ों पर चढ़ने का आनंद लेने लगे। कई विद्यार्थी गीत और संगीत सुनने और सुनाने का मजा लूट रहे थे। शिक्षक सभी विद्यार्थियों की गतिविधियों में सहभागी बन कर उनका उत्साह बढ़ा रहे थे।

"पिकनिक मनाते-मनाते अब आप लोग थक गए होंगे और पेट-पूजा का भी समय हो गया है। अपने-अपने लंच-बॉक्स खोलिए और शुरू हो जाइए।" मुस्कराते हुए शिक्षक महोदय ने विद्यार्थियों से कहा।

सभी बच्चे खाना खाने लगे लेकिन अब्दुल गुमसुम बैठा रहा।

अब्दुल की टांगें बचपन से ही कमजोर थीं। वह बैसाखियों का सहारा लेकर चलता था। इस तरह उसे उदास बैठा देख शिक्षक ने अब्दुल के पास आकर पूछा, ''अब्दुल, तुम इस तरह गुम-सुम क्यों बैठे हो? क्या तुम खाना नहीं खाओगे?''

''सर, मैं खाना नहीं लाया, मैं . . . मैं तो सर अनाथालय में रहता हूं।'' कहते हुए अब्दुल की आंखों में आंसू आ गए।

शिक्षक बोले, ''मुझे यह जान कर बहुत कष्ट हुआ कि तुम अनाथालय में रहते हो। लेकिन तुम तो बहुत साहसी बच्चे हो जो शारीरिक रूप से कमजोर और अनाथ होकर भी शिक्षा ग्रहण कर रहे हो। एक दिन तुम्हारी साधना जरूर रंग लाएगी। उठो अब्दुल, सभी साथियों के साथ मिल-बैठकर खाना खा लो।''

शिक्षक दूसरे बच्चों को अब्दुल को साथ खिलाने का निर्देश देकर चले गए। अब्दुल बैसाखी का सहारा लेकर एक साथी के पास पहुंचा वह बैठने का हुआ तभी उसके साथी ने उसे धक्का देकर गिरा दिया। और डाँटते हुए कहने लगा, ''तेरी ये मजाल कि मेरे साथ खाना खाए। तेरी जात का पता न मां-बाप का।''

अब्दुल को असहाय और रोते देख एक छात्र ने उसे उठाया। धक्का देने वाले छात्र को डांटा, बैसाखियां उठाकर अब्दुल को दीं और अपने साथ खाना खाने का आग्रह किया।

अब्दुल रोते हुए बोला ''नहीं अमित, मैं तुम्हारे साथ खाना खा कर तुम्हारा धर्म भ्रष्ट नहीं करूंगा। ये दूसरे साथी ठीक ही तो कहते हैं। मैं अनाथ हूँ। मेरा कोई नहीं हैं। मैं मुसलमान हूं। तुम हिन्दू हो।''

अमित ने अब्दुल को समझाया, ''देखो अब्दुल, मैं हिंदू-मुसलमान की बात तो जानता नहीं। हां, मेरी मां ने मुझे यह शिक्षा अवश्य दी है कि असहाय और भूखे को भोजन कराना और उसकी सहायता करना सबसे बड़ा धर्म है। आज से तुम मेरे दोस्त हो। क्या दोस्त की बात मान कर मेरे साथ खाना नहीं खाओगे?''

अब्दुल और अमित ने साथ-साथ खाना खाया। खाना खाकर दोनों दोस्त पास बहती हुई नदी किनारे घूमने निकल गए।

''देखो, अमित, पानी में तैरती हुई मछलियां कितनी सुंदर लग रही हैं? लगता है, कितनी खुश हैं?'' खुश होते हुए अब्दुल बोला।

''अरे, पेड़ पर बैठे चहकते हुए पक्षियों को तो देखो। ठंडी हवा में कैसी मस्ती से बैठे हैं। शहर में इतनी स्वच्छ हवा कहां मिल पाती है? इस पेड़ की डालियां कितनी मस्ती से झूम रही हैं, लगता है जैसे एक-दूसरे से गले मिल रही हों?'' कहते हुए अमित ने अब्दुल की तरफ देखा।

''अब्दुल, तुम चुप क्यों हो गए? अरे तुम्हारी आंखों में आंसू? अब क्या हुआ? बताओ न दोस्त।'' अब्दुल का हाथ पकड़ते हुए अमित ने पूछा।

''अमित, इन पक्षियों और मछलियों में भी क्या जाति-धर्म का कोई भेद-भाव होता है? क्या इनमें भी हिन्दू और मुस्लिम होते हैं?'' उदास अब्दुल ने अमित से प्रश्न किया। यह सुन कर अमित जोर का ठहाका लगाते हुए बोला, ''अरे बुद्धू, पशु-पक्षियों और मछलियों में भी कोई जाति और मजहब का भेद होता है? मछलियां बस मछलियां हैं। पक्षी बस पक्षी हैं। ये सब मिल-जुल कर रहते हैं। अरे,भूल गए क्या? सर ने बताया तो था कि ये तो इंसान ही है जो आदमी-आदमी में भेद करता है। फिर मैं तो तुम्हें अपना दोस्त और भाई मानता हूं।''

अमित और अब्दुल दोनों बात कर रहे थे। तभी झाड़ियों में से एक सांप निकल कर अमित के सामने फन फैला कर खड़ा हो गया। अब्दुल ने शोर मचाया, ''अमित! सांप-सांप! बचो, काट लेगा!''

सांप को देख अमित घबराया। डर के मारे वह चाह कर भी भाग नहीं पाया। आवाज भी ठीक से नहीं निकल पा रही थी।

अब्दुल जोर से चिल्लाया, ''सांप-सांप, बचाओ . . . बचाओ!''

उसकी आवाज सुनकर शिक्षक और विद्यार्थी दौड़े चले आए। सभी इस दृश्य को देखकर सहम गए। किसी को सूझ नहीं रहा था कि क्या किया जाए?

तभी बिजली की गति से अब्दुल ने सांप को अपनी बैसाखियों के बीच में दबा लिया। इस बीच अमित को निकलने का मौका मिल गया लेकिन अब्दुल की बैसाखियों की पकड़ से निकल कर सांप ने उसे ही डस लिया और झाड़ियों में

घुस गया।

दहशत से अब्दुल की बैसाखियां हाथ से छूट गईं, वह गिरा और उसका माथा एक बड़े पत्थर से जा टकराया। खून बहने लगा।

अब्दुल पर विष का असर होने लगा। ऊपर से सिर से खून भी काफी बहा।



शिक्षक ने काटने के स्थान पर बंध लगा दिया। सिर पर भी पट्टी कर दी गई, अब्दुल को तुरंत शहर के अस्पताल में दाखिल कराया गया। लेकिन अब्दुल की हालत बिगड़ने लगी। डॉक्टर ने बताया कि अब्दुल को तुरंत खून चढ़ाना पड़ेगा। नहीं तो जान को खतरा हो सकता है।

शिक्षक अपने छात्र को अपना खून देना चाहते थे लेकिन उनके खून का ग्रुप अब्दुल के खून से नहीं मिला। अमित के खून का ग्रुप अब्दुल के खून से मिल गया। अमित का खून अब्दुल को चढ़ाया गया। धीरे-धीरे अब्दुल को होश आ गया।

अब्दुल की जान बचने की खुशी में अमित की आंखों में आंसू बहने लगे। अमित अब्दुल के गले से लिपट गया। यह देख कर शिक्षक की आंखें भी गीली हो गईं।

शिक्षक ने अमित और अब्दुल को आर्शीवाद देते हुए कहा, "तुम दोनों अमूल्य रत्न हो। तुम बच्चे ही देश की अखंडता और एकता के सच्चे प्रहरी हो। देश और समाज को तोड़ने वालों, नफरत फैलाने वालों से सदा सजग रहना। तुम हमेशा जागते रह कर देश की सेवा करना, यही मेरा आशीर्वाद है।" ❑

माधो

गर्मी का मौसम था। धूप बढ़ती ही जा रही थी। तेज गर्मी में भी मोहन पौधों की गुड़ाई कर रहा था। मोहन श्रीकांत बाबू के घर के बगीचे में माली का काम करता है। वह भोला-भाला और अनपढ़ जरूर है, लेकिन पौधों की देखभाल बहुत चतुराई से अपने बच्चों की तरह करता है।

श्रीकांत बाबू ने जैसे ही घर के मुख्य द्वार से प्रवेश किया, उन्हें मोहन बगीचे में काम करता नजर आया। मोहन के पास जाकर बोले, "मोहन, देखते नहीं, कितनी तेज धूप है? ऐसे तो तुम बीमार पड़ जाओगे।"

"नहीं . . . नहीं साहब, हमें कुछ नहीं होगा, यह तो हमारा रोज का काम है" कहकर मुस्कराते हुए मोहन फिर काम में लग गया।

"आज तुम बहुत खुश दिखाई दे रहे हो? बात क्या है?" श्रीकांत बाबू ने हंसते हुए पूछा।

मोहन ने झिझकते हुए उत्तर दिया, "साहब, हमारा बेटा गांव से आया है। अपने कुंवर साहब हैं न, अमित बाबू। बस उन्हीं की उम्र का है। कल, आपसे मिलाने लाउंगा। अमित बेटा से मिल कर वह बहुत खुश होगा।"

"हां-हां, मोहन जरूर लेकर आना। हमें भी अच्छा लगेगा।" कहते हुए श्रीकांत बाबू चले गए।

दूसरे दिन मोहन अपने बेटे को लेकर श्रीकांत बाबू के घर आया। श्रीकांत बाबू सरकारी अधिकारी हैं तथा मिलनसार और सरल स्वभाव के व्यक्ति हैं।

श्रीकांत बाबू ने मोहन के बेटे से नाम पूछा तो वह सिर झुका कर चुपचाप खड़ा रहा। कोई जबाव ही नहीं दिया।

"अरे भाई मोहन! तुम्हारा बेटा बोलता क्यों नहीं?" श्रीकांत बाबू ने मुस्कराते हुए पूछा।

"साहब, अभी गांव से नया-नया आया है न! शरमाता है। धीरे-धीरे झिझक



हट जायेगी।'' मोहन हंसते हुए बोला, ''और साहब, प्यार से हम इसे माधो कहते हैं। परंतु इसकी मां को माधव नाम ज्यादा पसंद है। उसी ने इसका माधव रखा है, लेकिन साहब, माधो पढ़ता नहीं है। अगर आपकी दया से यह भी कुछ पढ़ना-लिखना सीख जाए तो इसकी जिंदगी संवर जायेगी। नहीं तो हमारी तरह अनपढ़ और गंवार रह जाएगा।''

श्रीकांत बाबू ने माधव के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा, ''बहुत प्यारा नाम है। तुम्हारा नाम माधव और तुम्हारे पिता का मोहन, बहुत सुंदर।'' श्रीकांत बाबू



हंसने लगे। फिर आवाज देकर अमित को बुलाया और माधव का परिचय कराते हुए बोले, ''देखो अमित, यह माधव है, मोहन का बेटा। गांव से आया है। तुम्हारी गर्मी की छुट्टियां शुरू हो गई हैं। इन छुट्टियों में तुम माधव को पढ़ना-लिखना सिखाना। क्यों, ठीक है न?''

''लेकिन पापा, छुट्टियां तो खेलने-कूदने के लिए होती हैं। मैं नहीं पढ़ा सकता।'' माधव की ओर मुंह बिचकाते हुए अमित ने बड़े रूखेपन से उत्तर दिया।

अमित की बात सुन कर श्रीकांत बाबू बोले, ''अमित, तुम रोज़ अखबार पढ़ते हो, रेडियो सुनते हो। सब में यही संदेश होता है कि अगर एक आदमी एक आदमी

को भी अक्षर-ज्ञान करा दे तो देश में कोई भी निरक्षर नहीं रहेगा। फिर तुम तो एक विद्यार्थी हो। तुम्हारा तो यह और भी कर्तव्य बन जाता है कि इन छुट्टियों में, किसी निरक्षर को पढ़ा-लिखा कर कोई नेक कार्य करो।"

"लेकिन पापा, मैं माधव को नहीं पढ़ा सकता। ये गांव का गंवार। मेरी और इसकी भला क्या बराबरी? आई एम सॉरी, पापा" कह कर कंधे उचकाते हुए अमित जाने लगा।

श्रीकांत बाबू क्रोध से कांपने लगे। वह अमित पर हाथ उठाने ही वाले थे कि मोहन हाथ जोड़ कर बीच में खड़ा हो गया। बोला, "साहब, रहने दो। छुट्टियां खत्म होने के बाद हम उसे स्कूल में डाल देंगे।" कहते हुए उदास मन से माधव को लेकर मोहन चला गया।

एक दिन श्रीकांत बाबू दफ्तर से घर पहुंचने ही वाले थे कि एक स्कूटर उनसे आ टकराया। टक्कर लगते ही श्रीकांत गिर पड़े। चोट अधिक लगने से बेहोश हो गए। माधव द्वार पर खड़ा यह सब देख रहा था। दौड़कर उसने स्कूटर वाले को पकड़ना चाहा लेकिन वह माधव को धक्का देकर स्कूटर लेकर भाग गया।

माधव ने दुर्घटना की सूचना दौड़कर अमित के घर दी। अमित ने माधव से स्कूटर का नम्बर पूछा तो माधव ने 'ना' में सिर हिला दिया।

अमित ने माधव को डांटते हुए कहा, "तुम सचमुच ही बुद्धू हो। क्या तुम स्कूटर का नम्बर नोट नहीं कर सकते थे? तुममें इतनी अक्ल भी नहीं है।"

डांट सुनकर माधव रोने लगा। रोते-रोते बोला, "हमें पढ़ना ही कहां आता है जो नम्बर ले लेते? ठीक है, अब हम यहां नहीं रहेंगे, अपने गांव चले जाएंगे।"

'हां चले जाओ। तुम्हें रोकता ही कौन है?" अमित ने गुस्से से कहा।

तभी अमित की मां और मोहन भी वहां आ गए। सबने मिलकर श्रीकांत बाबू को अस्पताल पहुंचाया। कई घंटों के बाद श्रीकांत होश में आए। अमित की मां ने रुआंसे स्वर में श्रीकांत बाबू को बताया, "माधव ने ही दुर्घटना में आपके घायल होने की सूचना हमें दी। अगर आज माधव न होता तो पता नहीं कितनी देर तक सड़क पर पड़े-पड़े आपका खून बहता रहता।"

श्रीकांत बाबू ने माधव को पास बुला कर खूब प्यार किया। बोले, "तुम बहुत अच्छे लड़के हो। तुम्हारा हृदय परोपकार और सेवा की भावना से भरा हुआ है।"

तभी बात काटते हुए अमित बोला, "लेकिन पापा, यह माधो तो मिट्टी का माधो है। इसने तो दुर्घटना करने वाले स्कूटर का भी नम्बर नोट नहीं किया।"

श्रीकांत बाबू अमित को समझाते हुए बोले, "नहीं-नहीं, अमित बेटे! माधो मिट्टी का माधो नहीं है। यह तो कुंदन है, जिसकी कीमत कोई जौहरी ही जान सकता है। इस बेचारे को अगर पढ़ना-लिखना आता तो यह स्कूटर का नम्बर ज़रूर पढ़ लेता। इसलिए तो मैंने तुमसे कहा था कि माधव को भी कुछ पढ़ना-लिखना सिखा दो। अमित बेटे, जरा धैर्यपूर्वक विचार करो, अगर आज माधव न होता तो मेरी जान खतरे में भी पड़ सकती थी। इससे जो बन पड़ा, इसने किया। माधव सच में ही बहुत प्यारा और होनहार लड़का है।"

श्रीकांत बाबू के स्नेह भरे बोल सुनकर माधव की हिचकियां बंध गईं।

माधव को इस तरह रोते देखकर अमित का दिल भी पसीज गया। अमित की आंखों में भी आंसू आ गए। माधव को वह गले से लगाते हुए बोला, "आज से तुम मेरे दोस्त हो। अब मैं तुम्हें पढ़ना-लिखना सिखाऊंगा। अब तुम अनपढ़ नहीं रहोगे, और हां, अब तुम अपने गांव भी नहीं जाओगे।"

अमित और माधव को गले मिलते देखकर मोहन का दिल भी भर आया। वह दोनों हाथ उठा कर भगवान से दुआ मांगने लगा, "हे ईश्वर! इन दोनों को लम्बी उम्र दे। इनका प्रेम सदा बना रहे।"

मोहन की आंखों में आंसू थे लेकिन दुख के नहीं, खुशी और आशीर्वाद के आंसू थे। ❑

कोयल का बलिदान

आम के पेड़ों का एक हरा भरा बगीचा था। एक पेड़ पर बैठी कोयल मीठी-मीठी आवाज में कुहुक रही थी। तभी वहां तेजी से उड़ता हुआ एक कौआ आया।

कौआ कभी इस पेड़ पर बैठता तो कभी उस पेड़ पर। जोर-जोर से कांव-कांव करता हुआ वह पंख फड़फड़ाए जा रहा था। कौए के इस शोर में कोयल का गाना भी बंद हो गया।

कोयल ने बड़े प्यार से कौए से पूछा, "कौए भाई। बहुत बेचैन दिखाई दे रहे हो। क्या मैं तुम्हारी इस बेचैनी का कारण जान सकती हूं?" कोयल की मीठी आवाज सुनकर कौए को कुछ शांति मिली। कौआ बोला, "बहन तुमने मुझे भाई कहा है तो तुम्हें अपनी बेचैनी का कारण जरूर बताऊंगा। यह जानते हुए भी कि मेरी इस बेचैनी का तुम्हारे पास कोई उपचार नहीं है।"

"कौए भाई, तुम बताओ तो सही। तुम्हारी समस्या का शायद कोई हल सूझ जाए।" कोयल ने बड़े धैर्य से कहा।

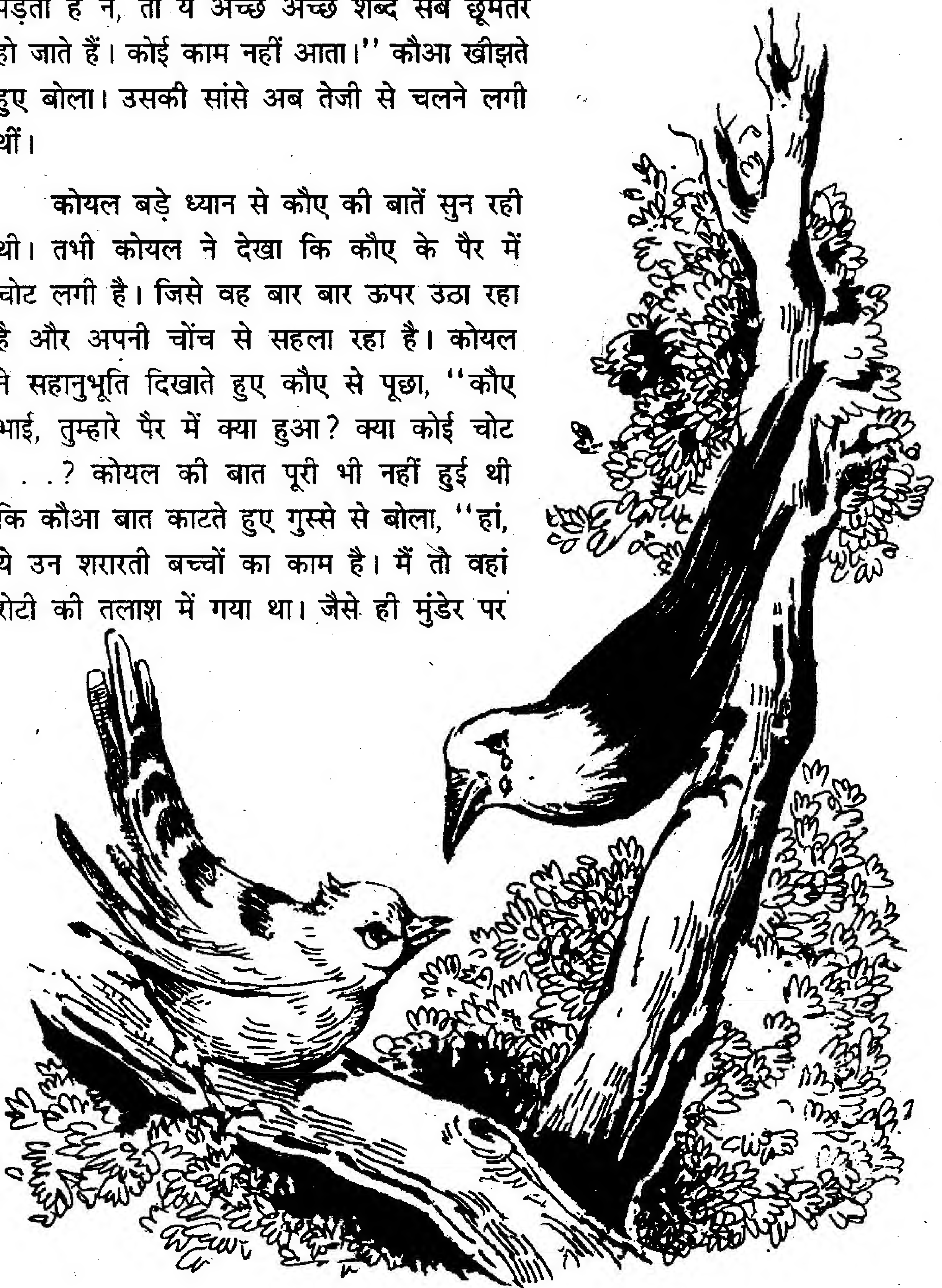
कौए ने कांव-कांव बंद कर अपने पंख समेट लिए और कोयल के सामने वाली डाल पर बैठ गया। बड़े ही करूण स्वर में कौआ बोला, "कोयल बहन, मुझे कोई प्यार नहीं करता। सब मुझे दुत्कारते हैं। जहां जाता हूं, ईंट-पत्थर मार कर भगा देते हैं। मेरी सूरत से भी सब नफरत करते हैं। मैं काला हूं क्या इसीलिए? लेकिन इसमें मेरा क्या दोष है? अब मैं यहां नहीं रहूंगा। दूर चला जाऊंगा। बहुत दूर . . . और फिर लौट कर कभी नहीं आउंगा, कभी नहीं आउंगा।" कहते-कहते कौऐ की आंखों से टप-टप आंसू गिरने लगे।

कोयल ने कौए को तसल्ली देते हुए कहा, "मेरे प्यारे कौए भाई, इस तरह दुखी नहीं होते। रोने से कोई बात नहीं बनती। दुख के समय धैर्य और विवेक से काम लेना चाहिए।"

"विवेक, धैर्य-ये शब्द सुनने में अच्छे लगते हैं, कोयल बहन, जब जान पर

पड़ती है न, तो ये अच्छे अच्छे शब्द सब छूमंतर हो जाते हैं। कोई काम नहीं आता।'' कौआ खीझते हुए बोला। उसकी सांसे अब तेजी से चलने लगी थीं।

कोयल बड़े ध्यान से कौए की बातें सुन रही थी। तभी कोयल ने देखा कि कौए के पैर में चोट लगी है। जिसे वह बार बार ऊपर उठा रहा है और अपनी चोंच से सहला रहा है। कोयल ने सहानुभूति दिखाते हुए कौए से पूछा, ''कौए भाई, तुम्हारे पैर में क्या हुआ? क्या कोई चोट . . .? कोयल की बात पूरी भी नहीं हुई थी कि कौआ बात काटते हुए गुस्से से बोला, ''हां, ये उन शरारती बच्चों का काम है। मैं तो वहां रोटी की तलाश में गया था। जैसे ही मुंडेर पर



बैठ कर कांव-कांव शुरू की, बच्चे मेरे पीछे ही पड़ गए। एक ने तो मुझे पत्थर ही दे मारा जो मेरे पैर में आकर लगा। अगर मैंने फुर्ती न दिखाई होती तो जान से ही हाथ धोना पड़ता। अब तुम्हीं बताओ कि मैंने उनका क्या बिगाड़ा था? जब भी कांव-कांव करके कुछ कहने की कोशिश करता हूं लोग मुझे मारने दौड़ते हैं। आखिर सब मुझसे इतना क्यों चिड़ते हैं।'' कहते कहते कौए का गला भर आया।

कोयल अब कौए की सारी परेशानी समझ गई थी। कोयल जानती थी कि कौआ बड़ा चालाक होता है। वह किसी को भी धोखा देने से नहीं चूकता। लेकिन कौए का दर्द सुनकर कोयल का दिल भी पिघल गया था। वह कौवे की मदद करना चाहती थी।

बाग के पास ही एक तालाब था। कोयल ने कौए को तालाब से पानी पीने की सलाह दी। कौए ने तालाब से कुछ पानी पिया तथा पंख फड़फड़ा कर पानी से अपना शरीर भी भिगो लिया। इससे उसे कुछ राहत मिली। कौआ फिर कोयल के पास आकर डाल पर बैठ गया।

''अब कैसा लग रहा है?'' कोयल ने पूछा, ''हां, अब कुछ ठीक लग रहा है।'' कौआ बोला। जिज्ञासा प्रकट करते हुए कौए ने फिर कोयल से प्रश्न किया, ''कोयल बहन, यह मेरी समझ में नहीं आता कि तुम्हें तो सब प्यार करते हैं। जब तुम गाना गाती हो तो सब लोग बड़े ध्यान से तुम्हारा गाना सुनते हैं। लेकिन जब मैं अपना गाना शुरु करता हूं तो मुझे मारने दौड़ते हैं। अब देखो न, तुम भी मेरी तरह काली हो, फिर मुझसे ही क्यों . . .?''

''अरे भइया! कौए, जरा ठहरो। मैं तुम्हें सब समझाती हूं। बात काले रंग की नहीं है। बात है मीठी बोली की। मैं जब मीठी बोली में गाती हूं तो लोगों के कानों में अमृत सा घुल जाता है। लोग इसलिए मेरा गाना पसंद करते हैं। तुम जिस कांव-कांव को अपना गाना कहते हो, वह लोगों को कानों में तीर सा चुभता है। तुम भी प्यार भरी मीठी बोली बोलो तो लोग तुम्हारा गाना भी पसंद करेंगे। दुनिया में जो लोग मधुर होते हैं, और विनम्र होते है, वे ही सब के मन को भाते हैं। प्रिय कौए भाई, हमारी बोली प्रिय लगने वाली और मिठास भरी होनी चाहिए। कहावत भी तो है, सत्य बोलो पर अप्रिय सत्य मत बोलो। देखो! कौए भाई, बुरा मत मानना। आज बिना कहे मैं नहीं रहूंगी।''

"हां हां तुम कहो, मैं सब सुनूंगा।" कौवा बोला। कोयल ने अपनी बात फिर शुरू की, "कौवे भाई, तुम्हारी बोली के अलावा तुम्हारी हरकतें भी अच्छी नहीं हैं। तुम्हारा स्वभाव सदैव दूसरों को हानि पहुंचाने का है। तुम कभी किसी बच्चे के हाथ की रोटी छीन कर उड़ जाते हो तो कभी किसी की रखी हुई चीज में चोंच डाल कर उसे खराब कर देते हो। उस पर भी कांव-कांव करके सब का सिर खाते हो। तुममें परोपकार नाम की कोई भावना है? हमने जन्म लिया है तो क्या खाने-पीने के लिए ही? दूसरों की भलाई करना भी तो हमारा फर्ज है। अगर जरूरत पड़े तो दूसरों की भलाई के लिए हमें अपनी जान भी दे देनी चाहिए।"

"बस, बस, बहुत हो गया, अपना उपदेश अपने पास ही रखो।" कौवा गुस्से से चोंच को इधर उधर घुमाते हुए बोला, "खाक अच्छा गाती हो। अपने मुंह मियां मिटठू बन रही हो। तुमने आज तक कितने परोपकार के काम किए हैं। जरा मैं भी तो सुनूं। चली हो, मुझे परोपकार का पाठ पढ़ाने।"

कोयल को कौए की बात पर जरा भी गुस्सा नहीं आया। वह मन ही मन



उसकी मूर्खता पर मुस्कुरा रही थी। तभी कोयल ने देखा कि कुछ बच्चे पेड़ के नीचे खड़े हुए कौए पर पत्थर से निशाना साध रहे हैं। यह देख कर कोयल के होश उड़ गए। कौए के प्राण संकट में थे।

कोयल ने साहस बटोर कर कौए से कहा, ''देखो, कुछ बच्चे तुम्हें मार डालना चाहते हैं, तुम तेजी से बिना समय गंवाएं उड़ जाओ।''

कौवे ने पेड़ से नीचे झांकते हुए कहा, ''अरे, ये तो वही बच्चे हैं, जिन्होंने मुझे पत्थर मार कर घायल किया था। कोयल बहन, मेरा पैर बहुत दर्द कर रहा है, मैं उड़ नहीं पाऊंगा। अब जो भाग्य में होगा, देखा जाएगा।''

कोयल को कुछ सूझ नहीं रहा था। उस की बुद्धि भी काम नहीं कर रही थीं। वह कौए को इस तरह मरते हुए देखना नहीं चाहती थी। वह सोचनें लगी कि अभी-अभी तो मैं कौए को परोपकार का उपदेश दे रही थी, और फिर मैंने कौए को भाई भी तो कहा है। भाई के जीवन की रक्षा करना भी तो बहन का कर्तव्य है। कुछ भी हो, मैं कौए को इस तरह मरने नहीं दूंगी।

पेड़ के नीचे से जैसे ही बच्चे ने निशाना साध कर कौए पर पत्थर चलाया, कोयल उड़ कर बीच में आ गई। पत्थर सीधा कोयल को जाकर लगा और वह वहीं ढेर हो गई। उस की खुली और ठहरी हुई आंखें मानों कह रही थीं, ''कौए भाई, तुम्हारी जान तो बच गई। अलविदा।''

यह देख कर कौआ भी अपने आंसू न रोक सका। वह कांव-कांव करके कह रहा था, ''धन्य हो कोयल बहन, तुमने सच्चा उपदेश देकर मेरी आंखें ही नहीं खोली बल्कि यह भी सिद्ध कर दिया कि परोपकारी जीव दूसरों के कल्याण के लिए अपना ज़ीवन भी बलिदान कर देते हैं।''

कोयल को मरा देख कर पत्थर मारने वाला बच्चा चीख पड़ा, ''अरे! यह तो कौआ नहीं कोयल है।'' वह दुखी होते हुए बोला, ''प्यारी कोयल, मैं तुम्हें मारना नहीं चाहता था, मुझ से बड़ी गलती हो गई।'' कहते-कहते वह रोने लगा। तभी बच्चों को कोयल के मरने पर बड़ा पश्चाताप हो रहा था। उन्होंने कसम खाई कि आज से वे किसी पक्षी या पशु को न तो पत्थर मारेंगे और न कभी सताएंगे।

कौआ भी कोयल के गुणों का बखान करता हुआ उड़ चला। ❑

सुनहरे धागे

"गुड़िया . . .गुड़िया . . . कहां छुप गई हमारी गुड़िया?" पुकारते हुए यादवेन्द्र जी ने घर में प्रवेश किया, "अरे! तुम यहां बैठी पुस्तक पढ़ रही हो। हमारे कई बार पुकारने पर भी तुमने जबाब क्यों नहीं दिया?"

"मैं नहीं बोलती आपसे, बाबूजी!" रूठते हुए गरिमा ने कहा। "अब तो मैं बड़ी हो गई हूं। अब भी आप मुझे गुड़िया ही कहते हैं, क्या अब भी मैं आपको गुड़िया 'जैसी ही लगती हूं।" शिकायत भरी मनुहार करती हुई गरिमा यादवेन्द्र जी से लिपट गई।

"देखो गरिमा बिटिया, तुम भले ही मुझ से भी लम्बी क्यों न हो जाओ, मेरे लिए तो तुम सदा ही छोटी-सी प्यारी-सी गुड़िया ही रहोगी," कहते हुए मुस्कुरा कर यादवेन्द्र जी ने गरिमा के माथे को चूम लिया।

"बाबूजी, सजमुच ही यह बहुत बड़ी हो गई है, अब इसे गुड़िया नहीं, बुढ़िया कहिए बुढ़िया।" छेड़ते हुए सौरभ बोला।

"देखा बाबूजी, भाई मुझे कितना चिढ़ाता है? भाई से मेरी कुट्टी।" सौरभ की तरफ जीभ निकालते हुए गरिमा ने मुंह बिचका दिया।

यादवेन्द्र दोनों भाई-बहिनों की बातें सुन कर खुश हो रहे थे परंतु अपने को गंभीर दिखाते हुए बोले, "देखो, मैं तुम दोनों भाई-बहिनों के बीच दाल-भात में मूसलचंद नहीं बनना चाहता।"

"बाबूजी, आप दाल-भात में मूसलचंद कैसे हो सकते हैं? आप तो हमारे प्यारे-प्यारे से बाबूजी हैं।" गरिमा ने यादवेन्द्र जी के कंधे पर सिर रखते हुए कहा। यादवेन्द्र जी मुस्करा कर अपने काम में व्यस्त हो गए।

सौरभ बड़ा होने के नाते गरिमा को रोज ही पढ़ाता था। कठिन प्रश्नों के उत्तर समझाता। विद्यालय से गरिमा को जो गृह कार्य मिलता, उसे पूरा कराने में मदद

करता। पढ़ते-पढ़ते दोनों भाई-बहिन झगड़ भी पड़ते और गरिमा किताबें उठा कर पैर पटकती हुई उठ कर भाग जाती। यह कोई नई बात नहीं थी। सूर्य उदय होने और अस्त होने की तरह उनके पढ़ने और झगड़ने का क्रम भी लगातार चलता रहता।



एक दिन दोनों भाई-बहिन बड़ी लगन से पढ़ाई में तल्लीन थे। सौरभ के एक प्रश्न का उत्तर गरिमा नहीं दे सकी तो सौरभ ने गुस्से में गरिमा की चोटी खींचते हुए कहा, "बुद्धू कहीं की, तेरे दिमाग में भूसा भरा है क्या? बार-बार समझाने पर भी आसान से प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकती।"



"हां . . . हां मैं तो बुद्धू हूं . . . मेरे सिर में तो भूसा भरा है . . . एक तुम्हीं बुद्धिमान हो . . . जाओ, मैं नहीं पढ़ती।" रोते-रोते गरिमा बिफर पड़ी। किताबें उठा कर फेंक दीं। चीख-चीख कर धरती-आसमान एक कर दिया।

शोर सुन कर गरिमा की मां ललिता दौड़ी हुई आई। "अरे बिटिया! जरा-जरा सी बात पर इतना गुस्सा नहीं किया करते। सौरभ तुम्हारा बड़ा भाई है। उसने तुम्हें डांट भी दिया, तो क्या हुआ?"

अपने आंचल से गरिमा के आंसुओं को पौंछते हुए बोली। लेकिन गरिमा का गुस्सा कम होने की जगह और बढ़ गया। यह स्वाभाविक भी है कि जब किसी दुखी इंसान को दुलार भरे शब्दों का सहारा मिल जाता है तो उसके हृदय का दुख आंसुओं में बदल कर आंखों से फूट पड़ता है।

गरिमा के आँसू रुकने का नाम भी नहीं ले रहे थे। बिखरे हुए सिर के लम्बे-लम्बे बाल उसके माथे और आंखों पर फैल गए थे। उन्हें हाथों से संवारते हुए गरिमा बोली, "अब मैं भाई को राखी भी नहीं बांधूगी।"

ललिता ने गरिमा को झिड़कते हुए कहा, "चुप, नासमझ कहीं की? बहिन भाई के लिए कभी ऐसा भी कहती है क्या? सभी भाई-बहिनों में थोड़ा बहुत झगड़ा तो होता ही रहता है।"

अब सौरभ ने भी महसूस किया कि गरिमा को डांट कर उसने ठीक नहीं किया। आखिर वह उसकी छोटी बहिन है। गरिमा के आंसुओं को बहते देख सौरभ का हृदय भी भर आया। सौरभ ने गरिमा को गले लगाते हुए कहा, "गरिमा, मेरी प्यारी बहिन, मैं कान पकड़ता हूं। आगे से मैं तुम्हें कभी नहीं डांटूंगा।"

सौरभ के गलती मानने और पुचकारने से गरिमा को कुछ राहत मिली और बिना होंठ हिलाए मानों आंखों से ही उसने कह दिया, 'ठीक है, अब मुझे भी कोई शिकायत नहीं है।'

राखी का दिन था। गरिमा के लिए तो हर साल ही यह दिन आनंद और खुशी का होता है। इस दिन भाई की कलाई पर वह राखी बांधती है। भाई के माथे पर रोली-चावल से तिलक करती है। राखी बांध कर उससे अपनी रक्षा का वचन लेती है और आशीर्वाद प्राप्त करती है। गरिमा जानती है कि सौरभ भाई को सुनहरे धागों वाली राखी ही पसंद है। इसीलिए बाजार से वह छांटकर भाई की पसंद की सुंदर सी राखी लाई है। थाली में सब चीजें सजाकर कब से वह भाई की प्रतीक्षा कर रही थी, पर भाई है कि उसका पता ही नहीं, उसे बहन का ख्याल ही नहीं। इन्हीं

विचारों में गरिमा खोई हुई थी।

अचानक बहुत घबराए-से यादवेन्द्र जी घर में आये और लड़खड़ाती आवाज़ में बोले, "अभी एक आदमी खबर देकर गया है कि सौरभ एक दुर्घटना में घायल हो गया है। सरकारी अस्पताल में दाखिल है। मैं जा रहा हूं, तुम लोग बाद में आ जाना। देखो घबराना मत, भगवान सब भला करेंगे।" . . . कहते हुए शीघ्रता से यादवेन्द्र जी घर से निकल गये।

यह सब सुनते ही ललिता के तो होश उड़ गए। गरिमा तो फूट-फूट कर रो पड़ी। ललिता ने गरिमा को धीरज बंधाते हुए अपने सीने से लगा लिया।

दोनों जल्दी से सौरभ को देखने अस्पताल दौड़ पड़ी। गरिमा को तो लग रहा



था कि उसके पंख लग जाएं और झट से उड़ कर भाई के पास पहुंच जाए। अस्पताल के निकट आते ही गरिमा तो अपना धैर्य ही खो बैठी। सड़क पार करने के लिए दौड़ पड़ी। ललिता उसे रोकने के लिए चीखती ही रह गई। तभी एक तेजी से आता हुआ स्कूटर गरिमा को टक्कर मारते हुए निकल गया। सड़क पर घायल पड़ी गरिमा दर्द से कराह रही थी।

ललिता अपना सिर पकड़ कर बैठ गई। हे भगवान्! यह सब क्या हो रहा है? कहते-कहते उसकी आंखों के आगे अंधेरा छा गया। चारों और भीड़ इकट्ठी हो गई थी। किसी तरह अपने को संभालते हुए लोगों की मदद से ललिता ने गरिमा को अस्पताल पहुँचाया।

अस्पताल में घायल गरिमा के शरीर पर कई जगह पट्टियां बंध गईं। ग्लूकोज लगा दिया गया। गरिमा की बेचैनी और छटपटाहट देख कर ललिता बार-बार अपने आंसू पौंछ रही थी। तभी ललिता ने देखा कि गरिमा 'सौरभ भाई-सौरभ भाई' कह कर धीरे-धीरे बुदबुदा रही है।

ललिता को भी अब सौरभ का ख्याल आया। वह पूछती हुई अस्पताल के उस वार्ड में पहुंची जहां सौरभ दाखिल था। मां को देखते ही उसके आंसुओं का बांध टूट गया। वह छोटे बच्चे की तरह बिलख उठा।

ललिता ने भी सौरभ को सीने से लगा लिया मानो कितने दिनों का बिछुड़ा हुआ बेटा मिला हो।

सौरभ की तबियत में अब काफी सुधार था। उसने ललिता से पूछा, "मां, गरिमा नहीं आई क्या?"

"गरिमा भी यहीं है। तू ठीक हो जा, वह भी तुझ से मिलने आएगी।" अपनी वेदना छिपाते हुए ललिता ने कहा।

ललिता के हाव-भाव से पास बैठे यादवेन्द्र जी को दाल में कुछ काला नज़र आया। उनके बार-बार ज़िद करने पर ललिता ने गरिमा के बारे में सारी बात बता दी। यादवेन्द्र जी और सौरभ भी गरिमा को देखने के लिए मचल उठे।

दोनों भाई-बहिन गले से लिपट कर खूब रोए। जब दोनों शांत हुए तो गरिमा ने अपनी मुट्ठी में बंद राखी निकाली जिनके सुनहरे धागे गरिमा के खून से लाल

हो गए थे। रुंधे हुए गले से गरिमा बोली, "भैया आज राखी का दिन है, राखी नहीं बंधवाओगे!"

सौरभ सिसकता हुआ बोला, "हां-हां, क्यों नहीं, प्यारी बहन, पर अब यह कभी मत कहना कि भैया को अब राखी कभी नहीं बांधूगी। लो, बांध दो राखी।" कहते हुए सौरभ ने अपना हाथ राखी बंधवाने के लिए गरिमा की ओर बढ़ा दिया। ❑

संकल्प

सुबह का समय था। बच्चे विद्यालय गणवेश में सजे-धजे, खुशियां बिखेरते हुए दौड़े विद्यालय चले आ रहे थे। वे उछलते-कूदते, शरारत, करते, दीन-दुनिया से बेखबर अपनी ही धुन में मस्त थे।

पक्षियो की तरह कुहकुते-कलरव करते हुए वे सबका मन मोह रहे थे। वर्षा रानी रात भर छम-छम करके बरसती रही। इस समय आसमान में हल्के-फुल्के बादल थे सुहावना मौसम था, शीतल मंद ब्यार बह रही थी। प्रकृति भी बच्चों के साथ खुशियां बांट रही थी।

सब बच्चे बहुत आनंदित थे लेकिन उनमें एक बच्चा ऐसा भी था जिसके चेहरे पर उदासी छाई हुई थी। वह मायूस सा सब बच्चों के पीछे-पीछे चल रहा था। किताबों के भारी बस्ते को बार-बार एक कन्धे से दूसरे कन्धे पर बदल रहा था। बहुत सारे बच्चों के साथ होते हुए भी वह अकेलापन महसूस कर रहा था।

"अरे राघव! तुम कुछ दिनों से इतना अलग क्यों रहते हो?" उसके सहपाठी मित्र राजीव ने पीछे से आकर उसके कन्धे पर हाथ रखते हुए पूछा। "बस, यूं ही . . . कोई बात नहीं।" कह कर राघव उसी तरह उदास चलता रहा। राजीव अपने मित्र के इस बदले हुए व्यवहार से चिंतित था। वह राघव के मन की बात जानना चाहता था। राजीव के बार-बार पूछने पर राघव के चेहरे पर उदासी का भाव और गहरा हो गया था। आंखों में आंसू छलछला आए थे। राजीव राघव के मन को और टटोलता, तभी वे विद्यालय के निकट पहुंच गए और दोनों अपनी-अपनी कक्षा में चले गए।

राघव का मन अब पढ़ाई में नहीं लगता था। वह भारी मन से विद्यालय जाता। घर में भी वह कोई काम रूचि से नहीं करता था। राघव के माता-पिता भी परेशान थे कि आखिर उसे हो क्या गया है? हर समय फूल-सा खिला रहने वाला राघव उदासी की मूर्ति बन कर रह गया है।

सब कामों में आगे रहने वाला राघव पिछड़ता क्यों जा रहा है। वे इस रहस्य को समझ नहीं पा रहे थे। पूछने पर राघव का एक ही उत्तर होता, "कुछ भी तो नहीं, आप बेकार ही परेशान हो रहे हैं।" उनकी बातों से राघव और दुखी न हो, यह सोच कर माता-पिता भी चुप रह जाते।

वार्षिक परीक्षा का परिणाम देखकर राघव के माता-पिता के तो पैरों के नीचे से जैसे जमीन ही खिसक गई। राघव तो पढ़ने-लिखने में अच्छा विद्यार्थी रहा है फिर इस बार परीक्षा में अनुत्तीर्ण कैसे हो गया? दिमाग पर बहुत जोर देने पर भी जब राघव के पिता को कुछ नहीं सुझा तो वे विद्यालय जाकर उसके शिक्षक से मिले।



राघव के शिक्षक ने बताया कि उसकी असफलता पर वह स्वयं आश्चर्य चकित हैं।

शिक्षक ने यह भी बताया कि राघव विद्यालय का एक योग्य और अनुशासित विद्यार्थी रहा है। खेल-कूद में भी उसकी रुचि रही है। दौड़ में तो राघव ने सदैव ही प्रथम स्थान प्राप्त किया है परन्तु पढ़ाई की दौड़ में इस बार वह कैसे पिछड़ गया।

फिर कुछ याद करते हुए वह बोले, "हां, इस वर्ष राघव कुछ बुझा-बुझा-सा अवश्य रहा है।" शिक्षक महोदय ने राघव में सुधार लाने का भरोसा दिला कर उसके पिता को घर भेज दिया।

एक दिन शिक्षक महोदय ने राघव को अपने कक्ष में बुलाया। उससे परीक्षा में असफल रहने का कारण पूछा तो राघव सिर झुका कर चुपचाप खड़ा रहा। पैरों से जमीन कुरेदता रहा। उसे सूझ ही नहीं रहा था कि वह क्या उत्तर दे?

शिक्षक महोदय ने अपनापन दिखाते हुए स्नेह भरे शब्दों में उससे कहा, "देखो राघव तुम मेरे प्रिय शिष्य हो। तुम पर कोई भी शिक्षक गर्व कर सकता है। तुम्हारा शिक्षक होने के नाते तुम्हें विश्वास दिलाता हूं कि मैं तुम्हारी हर समस्या को हल करने का प्रयास करूंगा। उतार फेंकों चेहरे से इस उदासी को और अपना हृदय मेरे सामने खोल कर रख दो!"

शिक्षक के प्यार और दुलार भरे शब्दों को सुन कर राघव की हिचकियां बंध गईं, वह एक छोटे बच्चे की तरह बिलख-बिलख कर रोने लगा। आंखों से बड़े-बड़े मोती लुढ़कने लगे। राघव को इस तरह रोते देखकर शिक्षक की आंखें भी सजल हो उठीं। उन्होंने राघव को रोने से रोका नहीं। वे सोचते थे कि रोने से राघव के हृदय का ताप कम हो जायेगा। और कुछ हद तक मन का मैल भी धुल जायेगा।

राघव की जब हिचकियां थमीं तो शिक्षक ने उसके सिर पर दुलार भरा हाथ फेर कर उसे शांत किया। राधव ने धीमे स्वर में अपने मन की बात शिक्षक को बताते हुए कहा, "सर, कुछ बच्चे 'कालू' कह कर मेरा मजाक उड़ाते हैं। कई बार तो मेरा बस्ता भी छीन लेते हैं और हाथ-पैर जोड़ने पर ही बस्ता वापिस करते हैं। कहते हैं कि तेरा बाप तो बहुत मामूली आदमी है, पढ़-लिख कर तू भी ऐसा

ही बनेगा। तुम लोगों की औकात ही क्या?''

''बस इतनी सी बात!'' मुस्कराते हुए शिक्षक महोदय ने प्रश्न भरी दृष्टि से राघव की ओर देखा। उसे समझाते हुए बोले, ''राघव, तुम्हारा रंग सांवला अवश्य है, लेकिन ऐसा किस किताब में लिखा है कि गोरे रंग वाले ही पढ़-लिख सकते हैं या वे ही बुद्धिमान होते हैं। तुम स्वस्थ हो, चतुर हो। अगर अपना लक्ष्य ऊंचा रख कर पढ़ने में परिश्रम करोगे तो निश्चित रूप से बड़े से बड़ा पद प्राप्त करने में सफल हो सकते हो। बुद्धि का सम्बन्ध रंग या जाति से नहीं है, उसी प्रकार शिक्षा का सम्बन्ध भी गोरे या काले रंग से नहीं है।'' शिक्षक महोदय की बातें राघव बड़े ध्यान से सुन रहा था।

उन्होंने राघव की पीठ थपथपाते हुए कहा, ''कोई भी इंसान छोटे या बड़े पद पर कार्य कर सकता है। महत्व इस बात का है कि अपने कार्यों के प्रति वह कितना निष्ठावान है? अपने पिता के प्रति उन बच्चों द्वारा कही गई बातों पर तुम्हें अधिक ध्यान नहीं देना चाहिए। इसी प्रकार जो भी व्यक्ति ज्ञान अथवा शिक्षा की साधना करेगा, वह उसी की शोभा बढ़ाएगी। राघव, समझ रहे हो न मेरी बात।''

''जी,'' कह कर राघव ने स्वीकृति में सिर हिलाया। शिक्षक महोदय ने राघव में आत्मविश्वास भरते हुए कहा, ''तुमने पुस्तकों में पढ़ा है कि संसार में अनेक ऐसे महापुरुष हुए हैं जिन्होंने साधारण परिवार में जन्म लेकर भी गरिमापूर्ण पदों को सुशोभित किया है।''

शिक्षक की बातें सुन कर राघव के चेहरे पर आशा और विश्वास के भाव साफ दिखाई दे रहे थे।

अपनी बात को आगे बढ़ाते हुए शिक्षक महोदय बोले, ''कुछ शरारती बच्चों के उपहास ने तुम्हारे मन को चोट पहुंचाई और उनके कटु शब्द तुम्हारे मन में घर कर गए। परिणाम यह हुआ कि तुम निराश हो गए। अपने अंदर आत्मविश्वास पैदा करो और उत्साह व लगन से अपनी पढ़ाई में लग जाओ, मेरा आशीर्वाद तुम्हारे साथ है।''

शिक्षक की बातों ने राघव के दिल और दिमाग पर जादू-सा असर किया। वह हीन भावना छोड़ कर पूरे मन से पढ़ाई में लग गया। उसकी लगन और साधना

का परिणाम था–उसका उत्तम वार्षिक परीक्षाफल।

राघव अब उचाईयों को छूने का संकल्प ले चुका था। शिक्षक महोदय ने राघव की सफलता पर प्रसन्नता प्रकट करते हुए कहा, "यह बात बिल्कुल सच्ची है कि सोचोगे जैसा, बनोगे वैसा।" ❑

हिरन और छोटू

घनघोर जंगल। विशाल और छायादार वृक्ष। चारों ओर फैली घनी झाड़ियों के समूह। बड़े-बड़े घास के मैदान। जहां-तहां पानी के झरने और शीतल जल वाली छोटी-बड़ी नदियां। इस जंगल में अनेकों जंगली जानवर इधर से उधर भाग दौड़ रहे थे।

एक वृद्ध हिरन लंगड़ाता हुआ धीरे-धीरे अपनी मंजिल की ओर बढ़ रहा था। रास्ते में एक ऊँचे-से टीले पर चढ़ कर जैसे ही उसने दूसरी तरफ उतरने की कोशिश की, वह अपने आपको संभाल नहीं पाया और लुढ़क कर नीचे आ गिरा। उसके गिरने की धम्म की आवाज से पास की झाड़ी में छुपा हुआ एक हिरन का बच्चा भाग निकला।

वृद्ध हिरन ने देखा-यह तो छोटू है। उसने छोटू को देख कर आवाज लगाई "अरे छोटू! तुम अकेले यहां क्यों छुपे हुए थे?"

छोटू ने पलट कर देखा तो उसकी आंखों को विश्वास ही नहीं हुआ। ये तो उसके प्यारे दादाजी हैं। वह अपनी नन्ही-नन्हीं टांगों से छलांग लगाता हुआ दादाजी के पास आकर बोला, "दादाजी, आप यहां कैसे? ये आपके पैर में क्या हुआ?"

"छोटे बच्चे बड़ों से सवाल नहीं किया करते, समझे छोटू।" वृद्ध हिरन ने अपना अधिकार जमाते हुए कहा। फिर अपनी पूंछ हिलाते हुए बोला, "पहले तुम अपने बारे में बताओ।"

दादाजी की ओर देखते हुए करुण स्वर में छोटू बोला, "दादाजी, मैं हिरनों के झुण्ड के साथ था। अचानक बड़ी जोर की हलचल हुई। बड़े हिरन तो भाग खड़े हुए। मुझसे तेज नहीं भागा गया तो मैं पास की झाड़ी में छुप गया।"

"लेकिन तेरे माता-पिता भी तुझे अकेला छोड़ कर भाग गए। बड़े निर्मोही हैं। बच्चे की जान की परवाह भी उन्होंने नहीं की। आज चल कर मैं उन्हें डांट लगाऊंगा।"



"नहीं दादाजी, ऐसी बात नहीं, वे तो भाग ही नहीं रहे थे। खतरा देख कर मैंने ही उन्हें भाग कर जान बचाने को कह दिया क्योंकि मैं तो झाड़ी में छुप कर सुरक्षित हो गया था।" छोटू ने दादाजी को सफाई देते हुए कहा।

"हूं . . . तो तू अपने माता-पिता को मेरी डांट से बचाना चाह रहा है। छोटू, वैसे तू है बहुत अच्छा। अपने माता-पिता का कितना आदर करता है। उनके प्रति तेरा इतना लगाव देख कर मुझे बहुत खुशी हुई।" वृद्ध हिरन प्यार से छोटू को सहलाते हुए बोला।

दादाजी से अपनी प्रशंसा सुनकर छोटू का चेहरा खिल उठा। खुशी के मारे वह कई बार उछला-कूदा और दादाजी के पैरों में लोट गया।

दादाजी ने कहा, "अच्छा, बहुत हो गया लाड़-प्यार। अब छोटू जी, तेजी से कुलाचें भरो और अपने ठिकाने पर अंधेरा होने से पहले पहुंच जाओ।"

"और आप दादाजी?" छोटू ने दादाजी की तरफ देखते हुए कहा।

"मैं . . . अरे छोटू, मेरा क्या है? मैं अब बूढ़ा हो गया हूं। शरीर भी कमजोर हो गया है। टांगों में कुलाचें भरने की अब शक्ति नहीं रही। अगर मुझे कुछ हो भी गया तो कुछ फर्क नहीं पड़ता।" वृद्ध हिरण ने छोटू को अपनी बेबसी बताते हुए कहा।

"लेकिन मुझे फर्क पड़ता है, दादाजी" छोटू रुआंसा होकर बोला।

"छोटू, तू तो मेरा कहना मानता है न! देख! मैंने तो दुनिया बहुत देख ली। तेरे सामने तो अभी सारी जिंदगी पड़ी है। धीरे-धीरे शाम हो जाएगी। जंगल अंधकार में डूब जाएगा। फिर होगा चारों ओर खतरा ही खतरा। अच्छा होगा, तू दिन के उजाले में ही अपने ठिकाने पर माता-पिता के पास पहुंच जाए। तेरे माता-पिता भी तेरी चिंता करते होंगे।" अपनापन दिखाते हुए वृद्ध हिरन ने छोटू को समझाया।

छोटू अपने दादाजी के समझाने पर भी टस से मस नहीं हुआ। दादाजी ने जब बहुत जिद की तो पैर पटकते हुए बोला, "दादाजी, चाहे आप इस कान से सुनो या उस कान से। मैं आपको अकेला और घायल छोड़ कर नहीं जाउंगा।"

दादाजी को याद दिलाते हुए आंखों में आंसू भर कर छोटू ने कहा, "दादाजी,

जब मैं बहुत छोटा था तो आप रात भर जाग कर मेरी रक्षा करते थे। आप हमेशा जंगली जानवरों से बचाने के लिए अपनी टांगों के बीच में छुपा कर मुझे सुलाते थे। मेरी जरा-सी तकलीफ भी आपको बेचैन कर देती थी। मुझे पालने में जो कष्ट आपने सहे हैं, उन्हें मैं मरते दम तक नहीं भुला सकता।"

"मरे तेरे दुश्मन। तुझे मेरी भी उमर लग जाए। अब आगे से अपने दादाजी के सामने ऐसे अपशकुन की बात मत कहना। तू तो मेरे जिगर का टुकड़ा है छोटू!" वृद्ध हिरन ने भावुक होते हुए कहा।

"फिर ठीक है दादाजी, अब आप भी मुझे जाने को मत कहना। नहीं तो मैं जोर-जोर से रोना शुरू कर दूंगा।" कहते हुए छोटू अपनी रुलाई नहीं रोक सका।

"अच्छा बाबा, ठीक है। अब मैं तुझे जाने को नहीं कहूंगा। दोनों साथ-साथ चलेंगे, अब तो खुश!" दादाजी ने अपने घायल पैर को सहलाते हुए कहा।

"यह हुई न बात, दादाजी।" प्यार से दोनों टांगे उठाते हुए छोटू बोला।

बातें करते-करते छोटू और वृद्ध हिरन चले



जा रहे थे। वृद्ध हिरन को बड़ी तेज प्यास लगी थी। दोनों पास की नदी पर पानी पीने पहुंचे। वे भर पेट पानी पीकर अपनी प्यास बुझा भी नहीं पाए थे कि उन्हें अपने पीछे कुछ आहट सी सुनाई दी।

वृद्ध हिरन ने चौंकते हुए कान खड़े करके पीछे पलट कर देखा तो उसके होश उड़ गए। दो-तीन शिकारी उन्हें पकड़ने की तैयारी में थे। दादाजी ने इशारे से छोटू को खतरे की बात समझा दी।

दोनों को सूझ ही नहीं रहा था कि कैसे जान बचाई जाए? आगे गहरी नदी है। पानी के अंदर जाने का मतलब था-मौत के मुंह में जाना। पीछे शिकारी है जिनसे बचने की भी कोई आशा नहीं है।

वृद्ध हिरन को अपनी जान की परवाह नहीं थी। लेकिन छोटू को देख कर उसकी आंखों में आंसू बहने लगे। उसे तो इस बात का दुख था कि उसके सामने ही उसके प्यारे छोटू की जान जायेगी। परन्तु ईश्वर की इच्छा के सामने उसने भी सिर झुका दिया।

आखिर दोनों ने निर्णय लिया कि नदी में कूदने की बजाय जंगल में भागने की कोशिश करते हैं। अगर सफल हुए तो ठीक नहीं तो मृत्यु निश्चित है ही।

दोनों जैसे ही जंगल की और भागे, शिकारियों ने रस्सी डालकर दोनों को बांध लिया और अपने घर ले जाकर बंद कर दिया।

रात हो चुकी थी। वृद्ध हिरन और छोटू भूखे-प्यासे अपनी जिंदगी की आखिरी घड़ियां गिनते हुए एक दूसरे के गले से लिपटे हुए खड़े थे। वृद्ध हिरन छोटू को ढांढस बधा रहा था। तभी शिकारी का छोटा बच्चा उधर आ निकला।

उस बच्चे ने दोनों हिरनों को बंद देखा तो ताली बजा-बजा कर बहुत खुश हुआ। तभी उसने देखा कि दोनों हिरनों की आंखों से आंसू बह रहे थे।

वह उन पर तरस खाते हुए बोला, "तुम दोनों तो रो रहे हो। समझा, तुम इस लिए रो रहे हो क्योंकि कल सुबह मेरे बापू तुम्हें मार डालेंगे। लेकिन तुम रोओ मत। मैं तुम्हें मरने नहीं दूंगा।"

उस छोटे बच्चे ने छोटू हिरन की तरफ हाथ बढ़ाते हुए कहा, "आओ, मेरे

पास आओ। तुम कितने प्यारे हो। तुम तो मेरी तरह ही छोटे हो।''

लेकिन बच्चे के हाथ बढ़ाने पर छोटू तो डर कर पीछे हट गया। छोटा बच्चा आगे बढ़ता हुआ बोला, ''तुम डरो नहीं, मुझे तुम अपना दोस्त समझो। एक दोस्त दूसरे दोस्त को रोते हुए कैसे देख सकता है। मेरे गुरुजी ने कक्षा में बताया था कि किसी जीव को मारना नहीं चाहिए। पशु-पक्षियों से भी प्रेम करना चाहिए। लेकिन मेरे बापू ऐसी बातें सुनकर मुझे डांट देते हैं।''

इधर-उधर देखते हुए धीमे स्वर में बच्चा बुदबुदाया, ''अभी इधर कोई नहीं है, मैं तुम्हें खोल देता हूं। तुम चुपके से निकल जाना, आवाज बिलकुल नहीं करना।''

छोटे बच्चे ने रस्सियां खोल कर दोनों हिरनों को बंधन मुक्त कर दिया। वृद्ध हिरन ने छोटे बच्चे के पास जाकर अपना सिर झुका दिया। उसकी आंखों से छोटे बच्चे के लिए कृतज्ञता के आंसू झर रहे थे।

वृद्ध हिरन अपने प्रिय छोटू को लेकर सावधानी से जंगल की ओर दौड़ पड़ा। छोटू भी बच्चे के प्रति कृतज्ञता दिखाते हुए कान फड़फड़ाने लगा।

छोटा बच्चा खुश होकर और हाथ-हिला कर वृद्ध हिरन और छोटू को 'अलविदा' कह रहा था। ❑

इस पुस्तक में शीर्षक कहानी 'मेहनत की महक' के अलावा नौ अन्य कहानियां शामिल हैं। रोचकशैली में लिखी गईं ये कहानियां बच्चों एवं किशोरों को प्रेम, भाईचारा, मेहनत, कर्तव्यपरायणता, एकता एवं बलिदान जैसे सद्‌गुणों को अपने जीवन में अपनाने की प्रेरणा देती हैं।

सुंदर रेखाचित्रों के संयोजन से पुस्तक की रोचकता बढ़ गई है।



प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
भारत सरकार

ISBN : 81-230-0527-X

मूल्य : 38.00 रुपये